श्री दि० जैन कुन्थु विजय ग्रन्थमाला समिति, जयपुर

चित्रसेन पद्मावती चरित्र

हिन्दी-भाषाकार

परम पूज्य श्री १०८ गणाधिपति गणधराचार्य
कुन्थुसागर जी महाराज

प्रकाशन संयोजक
शान्ति कुमार गंगवाल

प्रकाशक

श्री दिगम्बर जैन कुन्थु विजय ग्रन्थमाला समिति

कार्यालयः

१६३६ जौहरी बाजार, घी वालों का रास्ता,
कसेरों की गली

परम पूज्य श्री १०८ गणाधिपति गणधराचार्य
वात्सल्य रत्नाकर, जिनागम
सिद्धान्त महोदधि, श्रमण रत्न, स्याद्वादकेसरी,
कुंथुसागर जी महाराज के संघ सानिध्य में
माह अक्टुबर २००० में इचलकरंजी वर्षा योग
के शुभावसर पर प्रकाशित

सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य : स्वाध्याय/२० रूपये
(डाक व्यय अतिरिक्त)

मुद्रकः- मण्डावरा कम्प्यूटर्स
चौड़ा रास्ता जयपुर,
फोनः567587

पुस्तक प्राप्ति स्थान
शान्ति कुमार गंगवाल

प्रकाशन संयोजक
1936, जौहरी बाजार, घी वालों का रास्ता,
कसेरों की गली, जयपुर–302003 (राजस्थान)

परम पूज्य श्री १०८ गणाधिपति गणधरावार्य कुन्थुसागर महाराज के प्रकाशित ग्रंथ के बारे में विचार एवं मंगलमय शुभाशींवाद

द्वांदशाग जिनवाणी को भगवान ने अपनी दिव्य ध्वनि में चार अनुयोगों के रूप में कहा है उसमें प्रथम अनुयोग का स्थान "प्रथमानुयोग' है। प्रथमानुयोग में भगवान ने तरेसठ सलाका महापुरूषों का जीवन चरित्र कहाँ है। उसी के अनुसार आचार्यो ने लिखा है। उसके अन्तर्गत एक "चित्रसेन पदमावती शील कथा" नाम का ग्रंथ भी है। इसकी कथा बड़ी रोचक है। यह ग्रंथ अभी तक शास्त्र भंडारों का आभूषण ही बना हुआ था। और अभी तक प्रकाशित भी नही हुआ था क्योंकि साहित्यकारों का ध्यान ग्रंथ की ओर गया ही नही।

जब हमारे संघ का उत्तर भारत में विहार हुआ उस समय बडोत नगर में चातुर्मास के बाद शहापुर नगर में विहार हुआ। वहाँ पर शास्त्र भंडार देखने पर यह चित्रसेन पदमावती चरित्र की हस्तलिखित प्रति "पं मूलचंद" जी के द्वारा दोहे चोपाई आदि में रचित प्राप्त हुई। प्रति मैने देखी व पढ़ी। कथा मुझे अच्छी लगी। मैने विचार किया कि यह ग्रंथ अभी तक अप्रकाशित है। अवश्य ही यह ग्रंथ प्रकाश में आना चाहिये।

ग्रंथकार लिखते हैं कि मैने ग्रंथ की रचानाए आचार्य जिनसेन ग्रंथ के अनुसार की है वो कौनसा ग्रन्थ है अभी संस्कृत भाषा में कहाँ है, किस शास्त्र भंडार को शोभित कर रहा है। इसका हमें पता नहीं है। ग्रंथ अच्छा है। इसकी कथा बडी ही रोचक है, पढने वालो को अवश्य आनन्द आयेगा। यह सब ध्यान में रखते हुए हमने इस ग्रंथ को भाषान्तर किया। समय के अभाव में कुछ दिन यहाँ ऐसे ही पड़ा रहा। लेकिन मुजफरनगर वर्षयोग के बाद फिर इसके लेखन का कार्य हाथ में लिया और इसके लेखन का कार्य समाप्त हुआ। इसको पढने, पढ़ाने वाले व छपाने वाले आदि सभी का कल्याण हो।

यह ग्रंथ दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथ माला समिति से प्रकाशित हो रहा है। ग्रंथवाला के कर्मठ कार्य कर्त्ता गुरू भक्त श्री शांति कुमार गंगवाल जी व उनके पुत्र प्रदीप कुमार जी हैं। उनको मेरा बहुत–बहुत आशीर्वाद है।

गणाधिपति गणधराचार्य कुंथुसागर

प्रकाशकीय

मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि ग्रंथमाला समिति से २०वें पुष्प के रूप में चित्रसेन पद्मावती चरित्र पुस्तक का प्रकाशन हो रहा है। जिसका प्रकाशन अभी तक नहीं हो पाया था। प्रकाशित पुस्तक में कथा बड़ी ही रोचक है। पढ़ने वाले अवश्य ही इसे पढ़कर लाभान्वित होंगे। इस ग्रंथ की हिन्दी भाषान्तर परमपूज्य गणाधिपति गणधराचार्य श्री १०८ कुंथुसागरजी महाराज ने किया है इसके लिये हम महाराज के बहुत–बहुत आभारी है और उनके श्री चरणों में नमोस्तु अर्पितकर प्रार्थना करते हैं कि आपके अमूल्य समय में से समय निकालकर भव्य जीवों के लाभार्थ इस प्रकार के ग्रंथों की रचना भविष्य में भी करते रहें।

पुस्तक प्रकाशन के कार्य में सफलता मिलना और कार्यों का निर्विघ्न रूप से पूरा होना यह सब जिनेन्द्र प्रभु की कृपा व आचार्यों व साधुओं के शुभाशीर्वाद के साथ–साथ परमपूज्य श्री १०८ गणाधिपति गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज एवं श्री १०५ गणिनी आर्यिका विजयामती माताजी के शुभार्शीवाद आर्शिवन का ही फल मानता हूँ।

परम्पूज्या श्री १०५ गणिनी आर्यिका क्षेम श्री माताजी के भी हम कृतज्ञ हैं कि उन्होंने भी प्रकाशित पुस्तक की प्रेस कापी को तैयार करने में हमें सहयोग प्रदान किया है।

ग्रंथमाला समिति के सभी सहयोगी कार्यकर्त्ताओं को भी बहुत–बहुत धन्यवाद देता हूँ आप सभी के सहयोग से कार्य हो पा रहा है। इस कार्य में विशेष कर मेरे सुपुत्र चि. प्रदीप कुमार का विशेष सहयोग रहा है जो कि महाराज श्री के शुभाशीर्वाद से अपने आवश्यक कार्य में से समय निकालकर अपनी सेवाएं अर्पित कर रहा है।

पुस्तक प्रकाशन कार्य को सावधानी पूर्वक देखा गया है फिर भी अल्प समय में यह कार्य हुआ है। अतः कोई त्रुटि रही हो तो साधुगण, विद्वान एवं पाठकगण क्षमा करें।

अंत में परमपूज्य श्री १०८ गणाधिपति गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज के कर कमलों मे यह पुस्तक भेंट कर मैं आज अतीव प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ और उनसे प्रार्थना करता हूँ कि आप श्री इसका विमोचन कर हम सबको लाभान्वित करें।

शुभाशीर्वाद प्राप्त करने की भावना के साथ,
गुरू उपासक, संगीताचार्य
प्रकाशन संयोजक
शान्ति कुमार गंगवाल
(बी. कॉम.)

श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिति की स्थापना एवं किये गये प्रकाशनों की जानकारी

श्री दिगम्बर जैन कुंथु विजय ग्रंथमाला समिति, जयपुर (राज.) की स्थापना परम् पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथु सागर जी महाराज व परम पूज्या श्री १०५ गणिनी आर्यिका विजयामती माताजी के शुभाशीर्वाद से श्री गोमटेश्वर सहस्राभिषेक महोत्सव के शुभावसर पर दिनांक २४.२.८१ को श्रवणबेलगोल में की गयी थी।

इस ग्रंथमाला की स्थापना का परम उद्देश्य यही है कि इन दिनों तथाकथित विद्वानों द्वारा प्राचीन दिगम्बर जैन आचार्यों के आर्ष एवं प्रमाणिक ग्रंथों में स्वअनुकूल एवं आगम विपरीत परिवर्तन किया जा रहा है। जिससे जिनागम की आर्ष परम्परा एवं दिगम्बर जैन समाज की श्रद्धा के मूल्यों की जड़े हिलने लगी हैं। देव–भक्त, मुनि–भक्त दिगम्बर जैन समाज की मति को भ्रमित कर उन्हें देव–भक्ति एवं मुनि–भक्ति से परावृत किया जा रहा है। इस बात से चिन्तित होकर परम पूज्य श्री १०८ गणधराचार्य कुंथुसागर जी महाराज एवं श्री १०५ प्रथम गणिनी आर्यिका विजयामती माता जी ने भव्य जीवों को इससे बचाने हेतु इस ग्रंथमाला समिति की स्थापना करवाकर इस संस्था के माध्यम से ऐसे ग्रंथों का प्रकाशन करवाया है तथा करवा रहे हैं, जिससे इन ग्रंथों को पढ़कर भव्य जीव सही ज्ञान प्राप्त कर सके, जो पूर्वाचार्यों द्वारा रचित तथा तीर्थंकरों की वाणी के अनुसार है। इस ग्रंथमाला समिति को देश के सभी प्रमुख आचार्यों तथा साधुवों का पूर्ण आशीर्वाद प्राप्त है। इसलिये ग्रंथमाला समिति ने अब तक अल्प समय में विभिन्न विषयों पर १६ पुष्प प्रकाशित किये हैं, जो सभी पूज्य आचार्यों, परमपूज्य श्री १०८ आचार्य देश भूषणजी महाराज, श्री १०८ आचार्य रत्न विमलसागरजी महाराज, श्री १०८ आचार्य धर्मसागरजी महाराज, श्री

१०८ गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज तथा श्री १०८ आचार्य सन्मति सागरजी महाराज (अजमेर) के द्वारा समय–समय पर विशेष धार्मिक समारोहों में विमोचित किये गये हैं। सभी प्रकाशित ग्रंथ महत्वपूर्ण होने के साथ–साथ स्वाध्याय प्रेमियों के लिये बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुये हैं।

ग्रन्थमाला समिति द्वारा प्रकाशित किये गये ग्रन्थों के नाम इस प्रकार है :–

१. लघुविद्यानुवाद (द्वितीय संस्करण), २. श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर अनाहत (यंत्र, मंत्र विधि), ३. तजो मान करो ध्यान (विभिन्न ध्यान की मुद्राओं के रंगीन चित्रों सहित), ४. हुम्बुज श्रमण सिद्धान्त पाठावलि (७५ ग्रन्थों के स्तोत्रों का संकलन एक ही ग्रन्थ में किया गया है), ५. पुनर्मिलन (अंजना चरित्र), ६. शीतलनाथ पूजा विधान (संस्कृत), ७. वर्षायोग स्मारिका (वर्षायोग के कार्यक्रमों की झलक), ८. श्री सम्मेदशिखर माहात्म्यम् (प्रत्येक टोंक का चित्र तथा वंदना का फल प्रकाशित किया गया है), ९. रात्रि भोजन त्याग कथा (द्वितीय संस्करण), १०. शीतलनाथ पूजा विधान (हिन्दी), ११. श्री भैरव पद्मावती कल्प (यंत्र, मंत्र, विधि सहित), १२. सच्चा कवच (वज्रकरण की कथा), १३. श्री गोम्मट प्रश्नोत्तर चिंतामणि (३८ ध्यान के रंगीन चित्रों सहित ११०० पृष्ठों का वृहद ग्रन्थ जिसमें २,५७८ मूलभूत ग्रंथों के श्लोकों का संकलन किया गया है।), १४. धर्म ज्ञान एवं विज्ञान (जैन धर्म के तत्वों का सरल भाषा में प्रतिपादन), १५. शांति मण्डल कल्प (पूजा), १६. घंटाकर्ण मंत्र कल्प (यंत्र, मंत्र विधि सहित), १७. व्रत कथा कोष (४०० व्रत कथाओं की विधि एवं फल का वर्णन), १८. प्रतिष्ठा विधि दर्पण (मूर्तियों एवं मन्दिर निर्माण सम्बन्धित पूर्ण जानकारी एवं प्रतिष्ठा विधि का सम्पूर्ण विवरण), १९. भद्रबाहु संहिता एवं सामुद्रिक शास्त्र कर लखन।

उपरोक्त महत्वपूर्ण ग्रंथों के प्रकाशनों के अलावा इस ग्रन्थमाला समिति से समय–समय पर अन्य प्रकाशन जैसे परम पूज्य गणधराचार्य श्री का व परमपूज्या श्री १०५ गणिनी आर्यिका विजयामती माताजी के फोटो का प्रकाशन केशलोचन क्या और

क्यों ? जन्म जंयति पर्व क्यो? परम पूज्य आचार्य महावीर कीर्ति महाराज का जीवन परिचय पुस्तक, गणधराचार्य कुन्थुसागर जी महाराज का जीवन परिचय पुस्तक, संघाधिपति आचार्यो का कलैण्डर का प्रकाशन भी करवाया है।

ग्रंथमाला समिति के कार्यो में ये बात विशेष उल्लेखनीय है कि यह गंन्थमाला, ग्रंन्थ प्रकाशित होते ही सबसे पहले, आचार्यो साधुओं के संघो में विद्वानों को पत्रों के प्रकाशके को प्रकाशन खर्चो में सहयोग करने वाले दाताओं को व्यक्तिगत रूप से भेंट करती है या मात्र डाक खर्च पर भिजवाती है।

इस प्रकार पाठकगण अवलोकन करें कि ग्रन्थमाला समिति के पास आर्थिक साधन न होते हुऐ भी समय समय पर उपरोक्त महत्वपूर्ण ग्रंन्थों के प्रकाशन करवाने में सफलता प्राप्त की है। सभी ग्रन्थ एक से बढ कर एक है और सभी ज्ञानोपार्जन के लिऐ लाभकारी सिद्ध हुये है। ऐसे सभी आचार्यो, साधुओं, विद्वानों के विचार हमें समय–समय पर प्राप्त होते रहे है। यह सभी सफलता श्री जिनेन्द्र देव की कृपा के अलावा परम पूज्य सभी आचार्यो, साधुओं, आर्यिका माताओं के शुभाशीर्वाद के साथ–साथ परम पूज्य श्री १०८ गणाधिपति गणधराचार्य कुन्थुसागर जी महाराज व श्री १०५ गणिनी आर्यिका विजयामती माताजी के विशेष शुभाशीर्वाद से ही हो सकता है।

मुझे आशा ही नहीं बल्कि पूर्ण विश्वास है कि पाठकगण समिति द्वारा प्रकाशित ग्रन्थों का स्वाध्याय करके पूर्ण ज्ञानोपार्जन कर रहें है, और आगे इस ग्रन्थमाला समिति से जिन–जिन महत्त्वपूर्ण ग्रंथो का प्रकाशन होगा, उन्हे पढ़कर पूर्ण लाभ उठा सकेंगे, और त्रुटियों के क्षमा करेगें।

शांति कुमार गंगवाल
प्रकाशन संयोजक

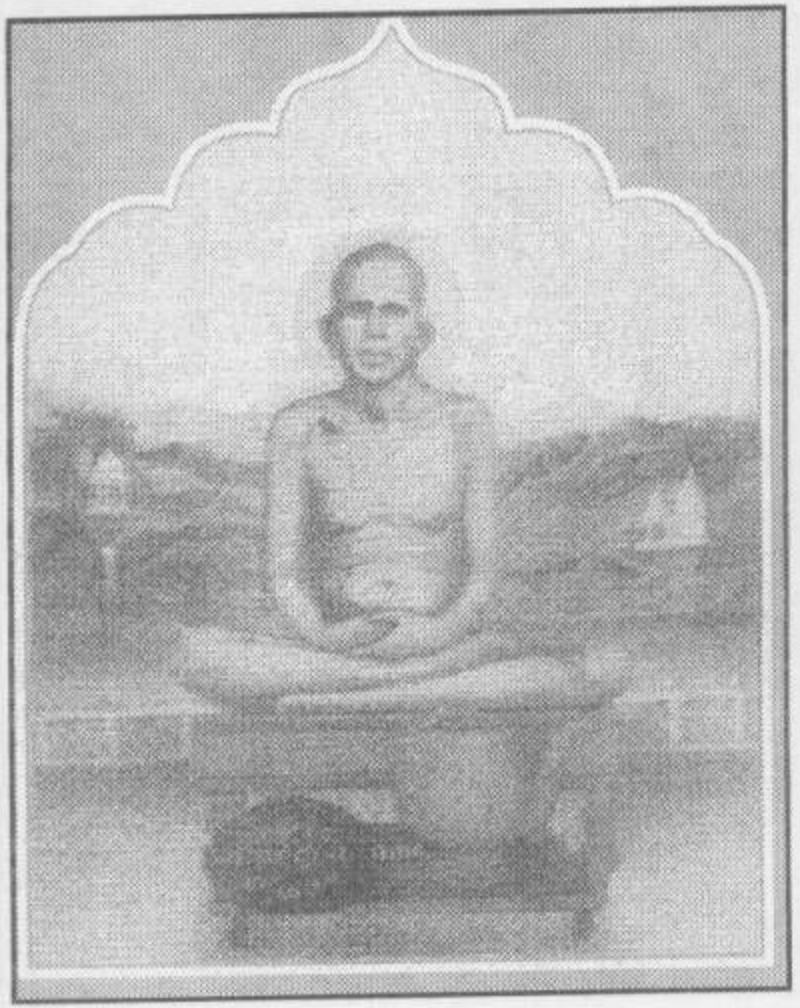

परम पूज्य समाधिसम्राट

श्री १०८ आचार्य आदिसागरजी महाराज (अंकलीकर)

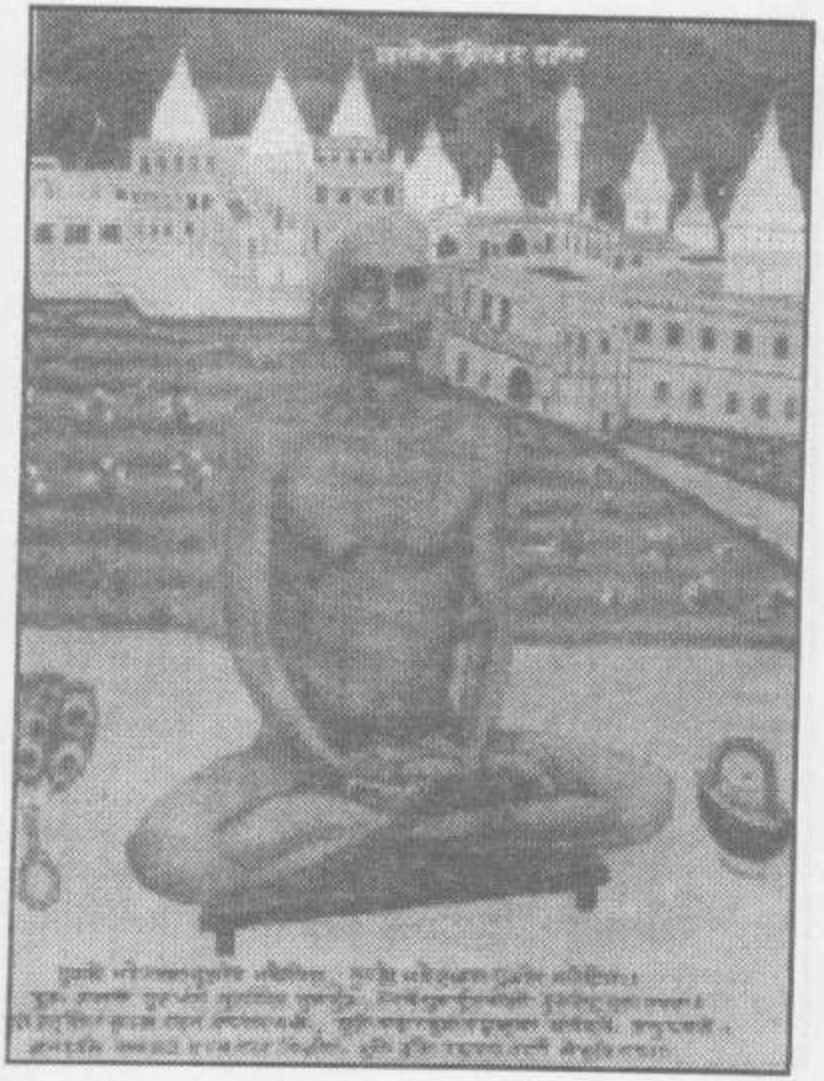

परम पूज्य समाधिसम्राट तीर्थभक्त शिरोमणी
श्री १०८ परम्पराचार्य श्री महावीरकीर्त्तिजी गुरू महाराज साहब

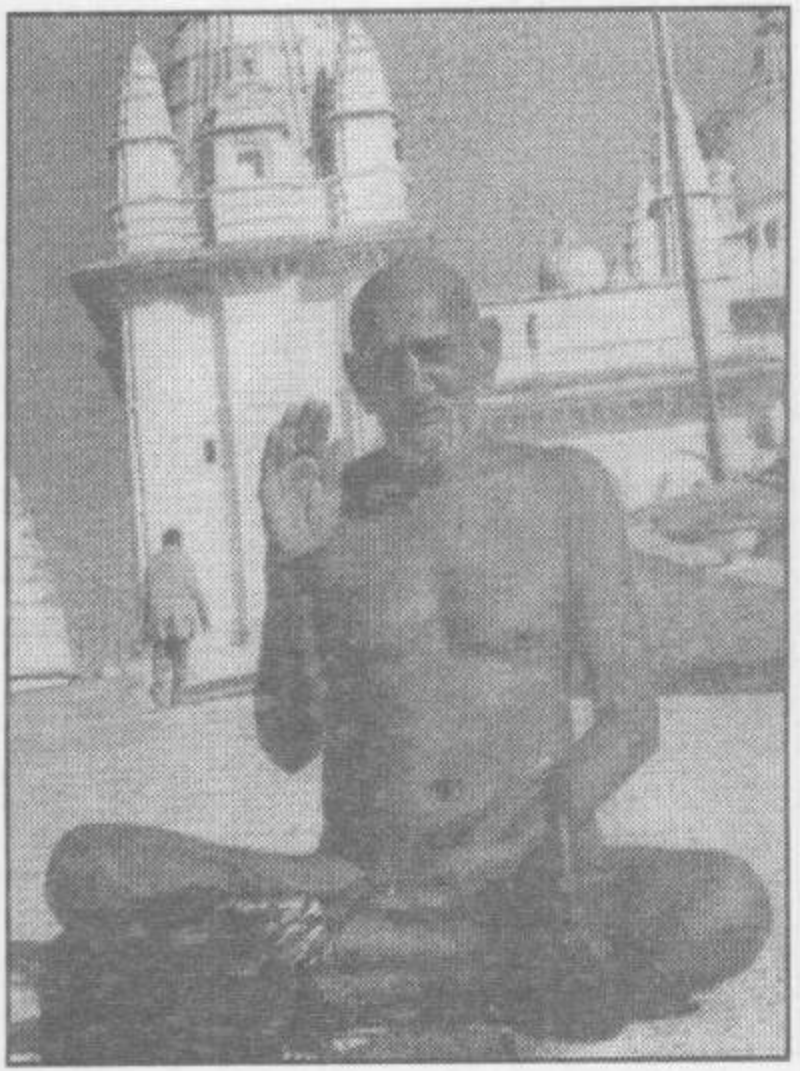

परम पूज्य सन्मार्ग दिवाकर निमित्तज्ञान शिरोमणि
श्री १०८ आचार्यरत्न विमलसागर जी महाराज

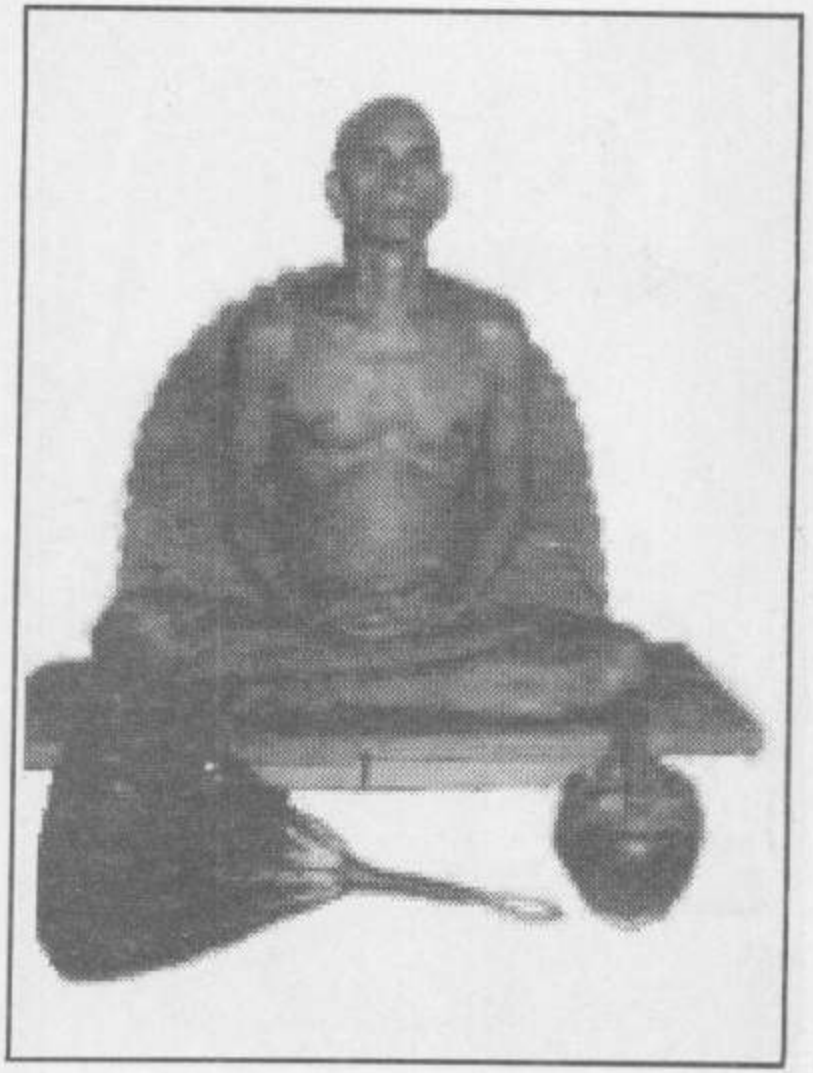

परम पूज्य श्री १०८ आचार्य महावीरकीर्त्तिजी महाराज के
पट्टाधीश आचार्य श्री १०८ सन्मतिसागरजी महाराज

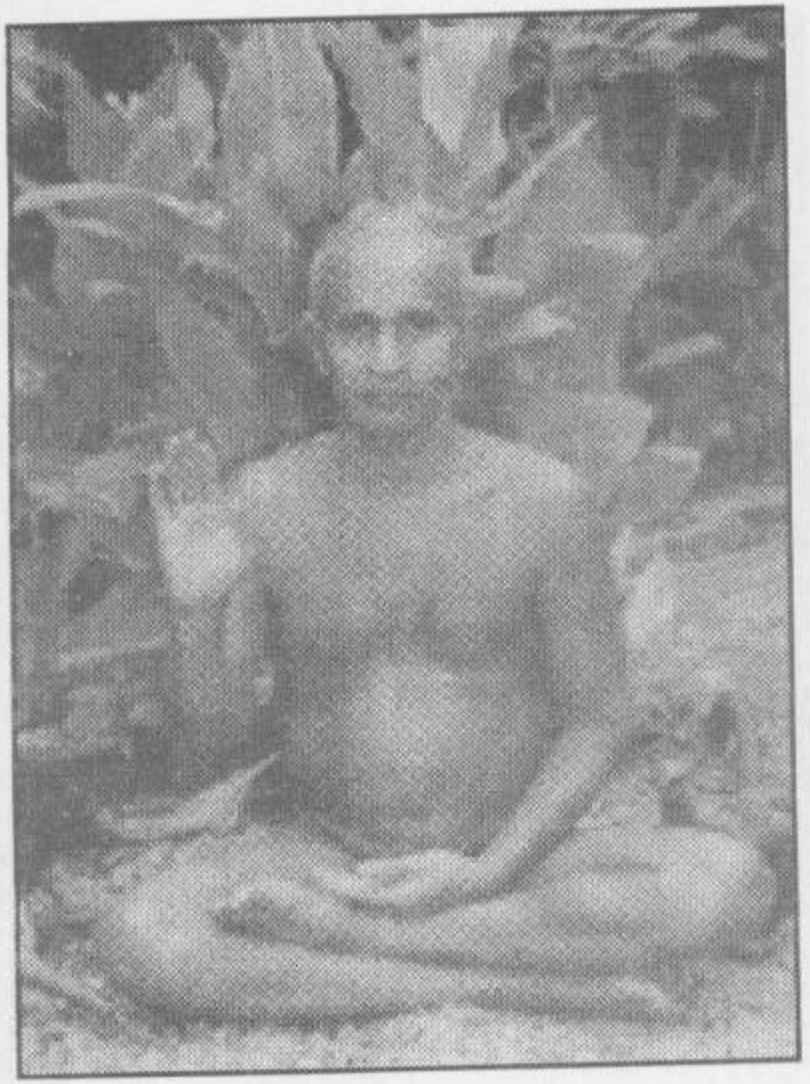

परम पूज्य श्री १०८ गणाधिपति,
वात्सल्य रत्नाकार, श्रमणरत्न, कुंथुसागरजी महाराज

परमपूज्या श्री १०५ गणिनी आर्यिका विदुषीरत्न, सम्यकज्ञान
शिरोमणि, सिद्धान्त विशारद,
जिनधर्म प्रचारिका विजयामति माताजी

परमपूज्या श्री १०५ गणिनी आर्यिका क्षेमश्री माताजी

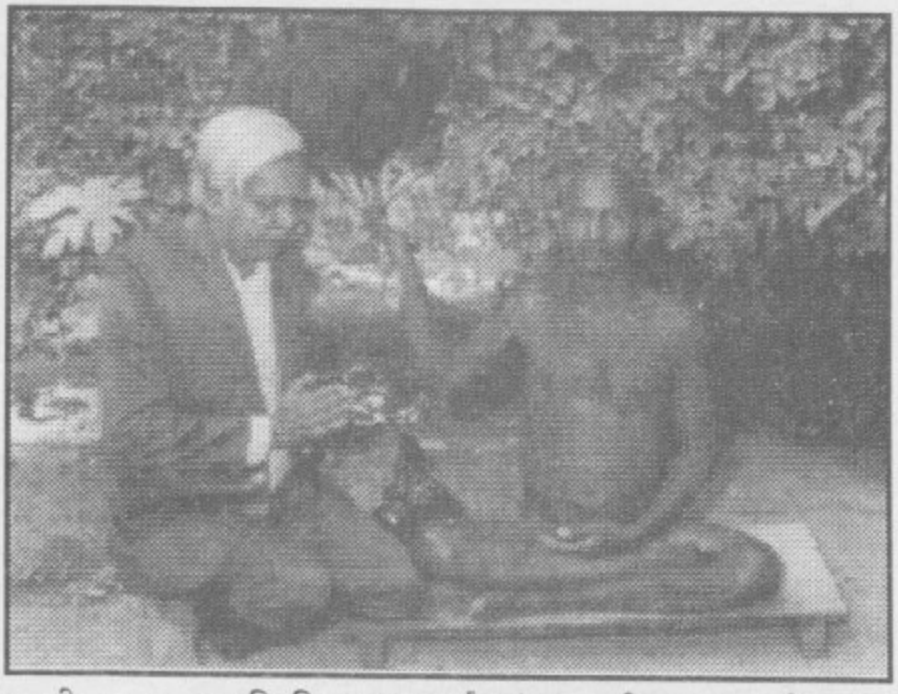

परम पूज्य श्री १०८ गणाधिपति गणधराचार्य कुंथुसागरजी महाराज से प्रकाशन कार्य करवाने हेतु शुभार्शिवाद प्राप्त करते हुए प्रकाशन संयोजक श्री शान्तिकुमार गंगवाल

ॐ

श्री पार्श्वनाथाय नमः

चित्रसेन पद्मावती चरित्र

हिन्दी भाषाकार परमपूज्य गणाधिपति गणधराचार्य कुन्थुसागर जी महाराज का

मंगलाचरण

"पार्श्व प्रभु को नमन कर, गुरु पद वंदो त्रिकाल।
कथा श्री चित्रसेन पद्मावती की भाषा लिखूं हर्षाय।"

श्लोक: प्रथमहि प्रणमों ओंकार, भवदधि दुःख विनासन हार।
जा प्रशाद सुख लहुं आनंद, कलुष हरन नमूं आदि जिनेन्द्र।।१।।

अर्थ : प्रथम "ओंकार" को नमस्कार करता हूँ, जो कि भव रूपी समुंद का विनाश करने वाला है। फिर जो क्लेश को हरण करने में समर्थ है व जिनके प्रसाद से सुख व आनन्द प्राप्त होता है। ऐसे आदिनाथ भगवान को मैं नमस्कार करता हूँ।

श्लोक: पुंडरीक अधिपति प्रभु कहें, वर्ष दिवस प्रभु पार गहैं।
ताहि सुमर कर लेखन गहूँ, शील रूप कुछ वर्णन कहूँ। ।।२।।

अर्थ : पुंडरीक नगरी के अधिपति भगवान कहते हैं वर्ष दिन प्रभु पार न गहे। ऐसे प्रभु का स्मरण करके मैं हाथ में कलम लेता हूँ और शील रूप कथा के बारे में लिखता हूँ।

श्लोक: भरत क्षेत्र नि सिर मोर, देश कलिंग बसै लिट ठौर।
पुरपत्रन व संतति हाल सै, धन धान्यादिक युक्त जु वसै। ।।३।।

अर्थ : भरत क्षेत्रनि सब सिरमौर है। उस क्षेत्र में कलिंग नाम का देश है। उस देश में पुर पत्र नादि नगर है और वे सब देश धन धान्यादि से परिपूर्ण हैं।

श्लोक: वन उपवन कर शोभित सर्व, वसें सेठ तिन धर बहु दर्व
सप्त भूमियां मंदिर लसें, मानो गगन मिलन को बसें। ।।४।।

अर्थ : उस देश में वन उपवन शोभित हो रहे हैं। सेठ लोग रहते हैं। उन सेठों के घर में बहुत धन सम्पत्ति है। सप्तखण्ड के महल मानो आकाश को ही छू रहे हैं या स्पर्श कर रहे हैं।

श्लोक: वीरसेन नरपति अरिसल्ल सकलदेश जीते भुज बल
सज्जन न जन का आदर धरै दुर्जन मान भंग सो करै। ।।५।।

अर्थ : वहाँ का राजा वीरसेन शत्रुओं के लिये शल्य रूप हैं। उसने समस्त देश के राजाओं को अपने बाहुबल से जीत लिया है और जो सज्जन लोगों का आदर करने वाला है और दुर्जनों का मान भंग करने वाला है।

श्लोक: रत्नमाल पट बंधुज कही रतिपति समशोभा जिन लही
चंद्र वदन मृगनयनी ताज, रामचन्द्र जिस सीता साज। ।।६।।

अर्थ : उस राजा की पट्टरानी रत्नमाला थी। जिस प्रकार कामदेव की रती ही हो, रामचन्द्र की सीता हो उसी प्रकार उस रानी का रूप चन्द्रमा के समान और मृगनयनी सा रूप है। उसकी शोभा का वर्णन ही नहीं किया जा सकता है।

श्लोक: कटिसिंह समता की जान अलकांलि–पट जो नाग समान
जो सब शोभा वरनन् कहो कहत कथा कछु अंतन लहौ।।७।।
तिनके पुत्र भयो सुखकार रतिसमरूप जु देवकुमार
सकल गुणौद्य भयो चित्रसेन मानो विधाताणिर्मे ऐन। ।।८।।

अर्थ : उस रानी की कमर सिंह के समान थी। जैसे अलका को नाग लिपट रहे थे, वैसे वह भी अपने पति की सहचारिणी थी। जितनी भी शोभा संसार में कही है वह सब वहाँ मौजूद थी। उन सब शोभाओं का वर्णन कहाँ तक कर सकते हैं। इसका कभी अन्त ही नहीं आ सकता है।

राजा और रानी के संयोग से उन्हें सुख को देने वाला पुत्र उत्पन्न हुआ। कामदेव के समान उसका रूप था। उसका नाम चित्रसेन रखा गया। वह धीरे-धीरे सम्पूर्ण गुणों की खान हो गया। मानो विधाता ने ही उसका निर्माण किया है।

श्लोक: बुद्धसार मंत्री बुद्धिमान साम, दाम, दण्ड भेद सुजान
सकल कला को जानन हार न्याय करै सबको सुखकार। ।।९।।

अर्थ : उस राजा का बुद्धसार नाम के समान ही मंत्री महान बुद्धिमान था। साम, दाम, दण्ड, भेद इन चारों नीतियों को जानने वाला और सम्पूर्ण कला को जानने वाला होते हुए समी को न्याय से सुख पहुँचाने वाला था।

श्लोक: रत्न सार सुत जान मंत्री रत्नकांति इव अंग महान्
कला बहत्तर जाननहार सत्यवंत विद्यालयसार।।१०।।

अर्थ : मंत्री के पुत्र का नाम रत्नसार है। उस मंत्री पुत्र के अंग की कांति रत्नकांति के समान थी। वह बहत्तर कलाओं को जानने वाला सत्यवान है और विद्यारूपी आलयों का मानो सार ही है और विद्यालयों में जाकर विद्या पढ़ने लगा।

श्लोक: गणअरमत्रह भयो लीन तर्क पंक भयो कोक प्रवीन्
सामुद्रिक सीखो सुभसार पढ़ै ग्रंथ व्याकरण अपार।।११।।

अर्थ : विद्या शास्त्र में पारंगत होकर फिर तर्क शास्त्र, कोक शास्त्र, सामुद्रिक शास्त्र, व्याकरण शास्त्र आदि पढ़कर प्रवीण हो गया।

श्लोक: सब ही विद्यासों कलानिधान बहुतो सीखो अर्थ पुरान
गायन विद्या पढ़ी महान् नाद करै किन्नर हिसमान्।।१२।।

अर्थ : सब ही प्रकार से विद्याओं ओर कलाओं से निवृत हो कर, फिर उसने अर्थ शास्त्र पढ़ा, पुराणों को पढ़ा और फिर गायन विद्या में प्रवीण होकर किन्नर के समान मधुरगाने लगा।

श्लोक: हथ, गय, वाहन, रथ, विहा आदि गुण बत्तीस प्रसिद्धे ताहि
चार वेद को जानन हार तर्क वितर्क पड़ै अनिवार।।१३।।

अर्थ : हाथी, घोड़ा, वाहन् रथ, विद्या आदि बत्तीस गुण प्रसिद्ध हैं वह उनको जानता था चारों वेदों को जानने वाला था तर्क शास्त्र व वितर्क शास्त्र भी उसने पढ़ा।

श्लोक: जयोतिष वैदिक गुन सीखियो आगम अध्यात्म पठ ही लियो
हैं प्रसिद्ध विद्या पद जितो, रत्नसार पढ़ लीनो तितो।।१४।।

अर्थ : ज्योतिष शास्त्र, वैदिक शास्त्र, आगम शास्त्र, अध्यात्म शास्त्र भी उसने पढ़ लिये। आचार्य कहते हैं कि जितनी भी प्रसिद्ध विद्याएँ व कलाऐं थीं वो सब रत्नसार ने पढ़ ली थीं।

दोहा

श्लोक: रत्नसार चित्रसेन की प्रीति परस्पर जान
बाया जो अंगसाथ हैं तिन सम तिन को जान।।१५।।

श्लोक: शशि चकोर सूरज कमल चातक धन की आस
तेसें प्राण तिन एक हैं देहजुदो पर कास।।१६।।

अर्थ : रत्नसार और चित्रसेन की परस्पर अत्यन्त प्रीति थी, जैसे वह एक दूसरे का बायां हाथ ही हैं।
शशि, चकोर व सूर्य से इन सब ने जैसे कमल प्रभावित होते हैं वैसे ही वे दोनों एक दूसरे से प्रभावित थे। चातक पक्षी जैसे मेघ समूह की ओर देखता रहता है, वैसे ही वह एक दूसरे को देखते रहते थे। आचार्यों ने यहाँ पर यहाँ तक कह दिया था कि दो शरीर होने पर भी प्राण उन दोनों में एक ही था।

प्रीति कथन

छप्पय

श्लोक: प्रथम क्षीर में नीर मित्र अपने संग कीनों
उदर जल्योजल आप दूध दुख होन न दीनो
पानी जलत निहार उफन परा ऊपर आयो
पावक परनें लगी अंबु फिर आन बचायो
यों होते सुख दुख विषै प्रीति परस्पर चाहिये
दृष्टांत देख बुद्धिजन लखो ऐसी प्रीत सराहिये ।।१७।।

अर्थ : पहले दूध ने पानी की संगति की। उसको अपने उदरस्थ कर लिया। उदरस्थ जल ने दूध को किसी प्रकार का कष्ट नहीं होने दिया। फिर दूध को चूल्हे पर चढ़ाने के बाद दूध के अन्दर रहने वाला पानी जलने लगा। दूध ने जब देखा पानी जल रहा है, तब दूध उफनकर ऊपर आ गया और अग्नि में गिरने लगा। तब

उफनते हुए दूध में पानी को डाल दिया तो अग्नि में गिरते हुये दूध को पानी ने बचा लिया। कवि ने दूध और पानी का उदाहरण मित्र प्रीति के लिये दिया है। इसी प्रकार सुख दुःख में दो मित्रों की प्रीति होनी चाहिये। उपरोक्त दृष्टांत देख ज्ञानी जनों ने लिखा है कि ऐसी प्रीति ही प्रशंसा करने योग्य है।

श्लोकः इसी रीत सै राज कर रहें भूपति सुखसों तिष्ठै तिस ही थान
दुर्जन जन को दण्ड देत हैं सज्जन कोरा खत हैं मान
ताके राजविषै पशुपक्षी दुष मूरत कोई न हिजा
सकल भूमि में निष कंटक सो राजा वीरसैन परमान
या विधसों तिष्टे सदा काल जात नहि जान
पूर्व कर्म के जोग सें नाना सुख विलसान ।।१८।।

अर्थ : इस प्रकार राज्य का काम काज सुचारू रूप से चल रहा था। दुर्जनों को दण्ड देता था और सज्जनों का मान रखता था। उस राजा के राज्य में दुष्ट पशु पक्षियों का कोई उपद्रव नहीं था। वह संपूर्ण पृथ्वी का निष्कंटक राज्य करता हुआ काल व्यतीत कर रहा था। पूर्व पुण्य कर्म के योग से नाना प्रकार के सुखों को भोग रहा था।

अडिल छन्द

श्लोकः एक दिन नृप वीर सेन पर धान जू
बैठो थो निज सभा बीच घर मान जू
ताहि समेंपुर–लोक सकल आते भये
नमस्कार कर जोर हाथ ठाटे भये ।।१९।।

अर्थ : एक दिन राजा वीरसेन अपनी सभा में बैठा था। उसी समय सारे नगर निवासी राजसभा में आये और राजा को हाथ जोड़कर नमस्कार करने लगे।

श्लोकः राजा तिनको कुशल क्षेम पूछत भयो
मान पूर्व तिन सबको बैठावत हुयो
ताहि समें नृप तिनको फिर इभ पूछियो
आवन को तुम कारज हमसे कह जियो ।।२०।।

अर्थ : राजा ने उनका कुशल क्षेम पूछा और फिर सम्मान पूर्वक सबको बैठाया। फिर राजा ने उनसे पूछा कि आप सब लोग यहाँ किस कारण से आये हैं, क्या कार्य है?

श्लोकः तब तिनमें ते एक पुरुष कहतो भयो
स्वामी तुमरे राज सकल सुख हम लियो
ताते अब कहु हाथ जोर विनती करें
सुनिये चित्त लगाय जो हम कारज सरें ।।२१।।

अर्थ : तब उनमें से एक आदमी कहने लगा कि स्वामिन्, आपके राज्य में हम लोगों ने संपूर्ण सुख को भोगा है, इसलिये हम लोग हाथ जोड़कर कुछ विनती (प्रार्थना) करते हैं। सो आप मन लगाकर हमारी प्रार्थना सुनो, जिससे हमारे कार्य की सिद्धि हो।

श्लोकः सुनिये हे जगदीश सकल विनती करै
कामदेव समरूप कुमार तुम्हरो धरै
रातदिवस पुर बीच भ्रमण कर्तो फिरै
ताहि देखकर सकल स्त्रियाँ मनको हरै।।२२।।

अर्थ : सुनिये हे जगदीश (राजन) हम सब विनती करते हैं कि आपका पुत्र जो राजकुमार है उसका रूप कामदेव के समान है, वह रात दिन नगर के बीच में भ्रमण करता फिरता है उस राजकुमार को देखकर नगर की स्त्रियाँ उस पर मोहित हो जाती हैं।

श्लोकः तिसके आते हि वीथि बीच पुर योषिता
सकल काम को छोड़कर रूप तिस देखता
ताते स्वामी अरज सकल परजा करै
चिन्तामणि जो रत्न यत्न ते ति धरै ।।२३।।

अर्थ : हे राजन! कुमार के आते ही नगर की स्त्रियाँ अपना कार्य छोड़कर कुमार का रूप ही देखने लग जाती हैं। इसलिये राजन् सारी प्रजा आप से प्रार्थना करती है कि जो चिन्तामणि रत्न हैं उसको यत्न से रखो।

श्लोकः "यदुक्तं" यस्मिन् कुलेयः पुरुषः प्रथमः
सएवयत्दनेनहिरक्षणीयः
तस्य प्रनष्टे सकलं विनष्टं
ननाभि भंगे त्थर का भंवति ।।२४।।

अर्थ : जिसके कुल में प्रधान पुरुष हैं, उसका यत्न से रक्षण करे। उसके नष्ट हो जाने पर सब कुछ नष्ट हो जाता है।

श्लोकः इतनी सुनकर महीनाथ चिन्ता करै
हाय–हाय मम सकल प्रजा अपजस धरै
धन्य पुरुष ते जग में जिनवर भाषियो
यौवन मद को पाय जीर्ण जिन राखियो ।।२५।।

अर्थ : इस प्रकार प्रजा के मुख से सुनकर राजा चिंता करने लगा कि हाय-हाय मेरी प्रजा मेरा अपयश कर रही है राजा विचार कर रहा है कि वो ही धन्य पुरुष है जिसके लिए जिनेश्वर ने कहा है जिनेश्वर ने उसकी प्रशंसा की है जिन्होंने यौवन मद को पाकर जीर्ण समगीना है। यानि कामदेव को वश में किया है।

श्लोकः यद्दुक्तं, भरयो–वन घर पवर धण्उ अरू सामी सम्माण
तिहुँ ग्व्वहि जेण गव्विया (हि) तिहु पुरसिंह सुविहाणा।।२६।।

भजन

अपजस भयो रे, दुःख नगरी पावै, सकल घर में निंद्या कराई
मुख काला हो जावे। दुःख नगरी पावे ।।२७।।
अैसो पुत्र मुझ को प्यारा नहिं जो कुल को दाग लगावै
दुःख नगरी पावै ।।२८।।
कर्ण दुखी जिस स्वर्ण से होवें काहे को सोना जनावै,
दुःख नगरी पावै।।२९।।
भृकुटी भीषण राजा कीनी, मन में क्रोध जुलावै
दुःख नगरी पावै।।३०।।
ताहि समें कुमरा तहां आयो नमस्कार करावै
दुःख नगरी पावै। ।।३१।।

क्रोध रूप जब तात को देखै विस्मै कुमार को आवै
दुःख नगरी पावै ।।३२।।
बहुत क्रोध कर कुंवर के ऊपर, असै वचन सुनावै
दुःख नगरी पावै ।।३३।।
मंत्री सुनो कुमर को अवहिं तिनपान का वीड़ा दिखावै
दुःख नगरी पावै ।।३४।।
तिसी समैं कह दीनो कुंवर से देश निकाल फरमावै
दुःख नगरी पावै ।।३५।।
ऐसे वचन सुने जब नृप के हाय–हाय मुख गावै
दुःख नगरी पावै ।।३६।।
अकस्मात तहाँ व्रजपात हुवो, धृग–धृग सवहि सुनावै
दुःख नगरी पावै ।।३७।।
राजा होवै जग की शहश, शुभाशुभ नहिं भावै
दुःख नगरी पावै ।।३८।।
मूलचन्द कहै असै राजा को, कर्म गति भरमावै
दुःख नगरी पावै ।।३६।।

''सवैया''

श्लोकः माताजी बाते सुनो हमरी हमचर्ण कमल को शीश नवाई
जो कछु चूक परी हमसै सोतो माफ करो अब मेरी माई।। ४०अ।।

अर्थ : हे माता! आप हमारी बात सुनो, हम आपके चरणों में नमस्कार करते हैं। जो कुछ भूल हमसे हुई है, माता उसको हमको क्षमा करो।

श्लोकः हम तुमसे प्रभु रूठ गयो अब कर्म गति कछु वरनी न जाई
देश निकाल को हुकुमदियो माता आन के हमने तुमसे सुनाई ।४०ब।।

अर्थ : हे माँ, अब हमारे से और तुम्हारे से भगवान रूठ गया है, क्योंकि कर्म की गति का कौन वर्णन कर सकता है। राजा ने हमको देश से निकलवाने का हुक्म दिया है इसलिये हे माता, हमने आकर आप को यह समाचार कहे हैं।

श्लोकः ऐसी बात सुनी जब कुंवर की माता ने धरती पर पछाड़ जो खाई।
सुधना रही कछु तन मन की संग सुहेली जो जल छिडकाई।
सुध जो हुई कछु तन मन की तब हाय–हाय मुखते जु कहाई
गुणवान तुम पुत्र मेरे अवतेंने तो आन के कहा सुनाई।।४१।।

अर्थ : इस प्रकार की बात पुत्र के मुख से सुनकर माता पछाड़ खाकर जमीन पर गिर पड़ी। वह अपने शरीर की भी सुध बुध खो बैठी। तब संग की सहेलियों ने माता के मुख पर पानी का छिड़काव किया। कुछ समय के बाद उस माता की मूर्छा दूर हुई तब वह मुख से हाय-हाय करने लगी, और कहने लगी कि हे पुत्र तुमने आकर यह क्या बात सुनाई ।

श्लोकः हा गुण सागर साध अगाध कहा कवि आपनी बुद्ध लगाई
मोहे अनाथ को छोड़ के नन्दन कहाँ को अवतें सुता भ्रमाई
में नव मास जु धारो उदर में अब विधना दुखः दियो दिखाई।
एसें विलाप जु रानी करै अरू बार–बार धरणी गिर जाई ।।४२।।

अर्थ : हे पुत्र! तेरे अन्दर अथाह गुण हैं अब मैं क्या करूं। हे विधाता मुझ अनाथ को छोड़कर मेरे पुत्र को कहाँ भ्रमण करायेगा। मैंने इसको नौ महिने उदर में धारण किया है, अब विधाता ने ऐसा दुःख दिखा दिया है। इस प्रकार रानी विलाप करती हुई बार-बार धरती पर गिरने लगी।

श्लोकः ऐसो रूप लखो जब माता को चित्रसेन तिनको समझाई
पिता वचन परमान किये अब माता मेरे पै उलंघै न जाई
जो विधना ने अंक लिखै सो तो हो कै रहै जिय सोच ले माई
शुभ अरू अशुभ हैं कर्म के साथहि माता सुनो दुःख हर गमाई ।।४३।।

अर्थ : इस प्रकार दुःखी माता को देखकर चित्रसेन माता को समझाने लगा, हे माता ! मैंने पिताजी को जो वचन प्रमाण दिये हैं उनके वचन का मैं उल्लंघन नहीं कर सकता। जो विधि ने अंक लिखे हैं वो तो होकर ही रहेगा। हे माता, अपने मन में सोच लो। शुभ और अशुभ जो कुछ हैं वो सब कर्म का खेल है। उसी से हर्ष और विषाद होता है।

श्लोकः माता सीख करै तब पुत्र को सुन लीजो तुम मन, वच काई
चौर लवार पर त्रिय संगति इनकी कुमार को कसम दिवाई
पुत्र के मोंह से माता ने जब सप्त जु रत्न खरच के ताई
लेकर रत्न जु नमन करी, तव खडग जु लेके तहाँ तें चलाई।।४४।।

अर्थः माता पुत्र को सीख (शिक्षा) दे रही हैं। हे पुत्र! इसे मन वचन काय से सुनो। चोर, लबाड और पर स्त्री की संगति कभी मत करना। उसकी तुम सौगन्ध खाओ। पुत्र को सौगन्ध दिलवाई। पुत्र के मोह से माता ने अपने कुंवर को सात रत्न देकर विदा किया। चित्रसेन कुमार हाथ में खड्ग लेकर वहाँ से विदा हुआ।

श्लोकः मित्र के घर को पयान कियौ, दिये सन्मुख आगै मित्र मिलाई
पूछै मित्र कहो नृप नंदन नैन रहै तुमरे जल छाई।
कहा तुम सोच हुई हैं कुमर जी कहां को पयान किये तुम भाई
चित की चिन्ता छोड़के मित्र जु सकल कहो तुम विथा बनाई।।४५।।

अर्थ : माता के वहां से चलकर राजकुमार मित्र के घर पर गया और मित्र उसे वहीं मिल गया। मित्र ने राजकुमार की अगवानी की और पुछा, हे राजकुमार ! आज आपके आंखों में पानी दिखाई दे रहा है। आपको क्या चिन्ता उत्पन्न हुई और अब किधर तुमने जाने का सोचा है। सम्पूर्ण चिंता छोड़कर हे मित्र! मुझे सम्पूर्ण बात कहो। सब हृदय की व्यंथा कहे।

श्लोकः ताहि समें नृप नंदन बोलै जो कित्यों ई दई बतलाई
नहित कुछ अन्तर मन में राखो मित्र ताई के सुकन से भाई
ये जब बात सुनी हैं कुमर की मन में सोच कछुक जब छाई
फेर जु सुर मताई धारी, मन में खडग जु लेके प्रछन्न चलाई।।४६।।

अर्थ : उस समय राजा के पुत्र ने अपने मित्र को सब बात ज्यों की त्यों बता दी। अपने मन में कुछ भी बात छुपाकर नहीं रखी। मित्र ने ध्यानपूर्वक सब बातें सुनीं तब मंत्री पुत्र मन में कुछ खेद खिन्न हुआ। फिर मन में शूरवीरता धारण कर वो भी हाथ में खडग लेकर प्रशन्नता से राजकुमार के साथ चल दिया।

श्लोक: सुहृदि निरंतर चिते गुणवति भृत्येप्रियाषु नारीषु
स्वामिनी स्वौ हृदि चिते निवेद्य दुःख सुखी भवती।।४७।।

अर्थ : जिसका हृदय निर्मल है चाहे गुणवान नौकर, नारी अथवा मित्र हो उसको अपने हृदय की बात बताकर सुखी होना चाहिये।

छंदचाल

श्लोक: तब वहां से गमन कराई कर्मो पर ढारत जाई
नहि सोच कछु जिय धारें प्रभु जिनवर मुख से उचारै।।४८।।

अर्थ : तब दोनों मित्र वहां से अपने भाग्य के ऊपर विश्वास रख कर चल दिये। अपने मन में कुछ भी सोच नहीं करते हुए प्रभु जिनेन्द्र देव का नाम उच्चारण करते करते जा रहे थे।

श्लोक: अविलंब प्रयान कराई आये अटवी के मांही
तब अस्त भयोदिन माना, एक वृक्ष तले सुख ठाना।।४९।।

अर्थ : वे दोनों शीघ्र गति से प्रयाण करते हुये एक जंगल में आये। वहां पर उन दोनों को रात्रि हो गई। इसलिए वृक्ष के नीचे ठहर गये और रात बिताने का निश्चय किया।

श्लोक: मारग में दुःख उपजायो सोयो राजकुमार सुख पायो
रत्नसार जु पहरा देवै, प्रभु अपने के पग सेवैं।।५०।।

अर्थ : जो रास्ते की थकावट थी उसको दूर करने के लिये राजकुमार सो गया। मंत्री पुत्र ने कहा आप सो जाओं मैं पहरा दे रहा हूँ और बाद में वह राजकुमार के पांव भी दबाने लगा।

श्लोक: तहां एक जु अचरज देखो, देवों की ध्वनी तहां पेखो।
तब सुनके तिनकी ध्वनी आश्चर्य भयो तिस तब हीं।।५१।।

अर्थ : इतने में ही वहां पर एक प्रकार की देव ध्वनि सुनाई दी, सुनकर मंत्री पुत्र को आश्चर्य हुआ।

श्लोक: तब उसने राजकुमार को उठाया ताहि अचरज एह दिखायो
ऐसो शब्द मधुर गति जाकी सुन कुमार, खुशी भयो बाकी।।५२।।

अर्थ : तब मंत्री पुत्र ने राजकुमार को उठाया और उसको वह आश्चर्य

दिखाया। राजकुमार ने शब्द सुनकर यह शब्द तो बहुत मधुर हैं ऐसा कहता हुआ मन में बहुत आनन्दित हुआ।

श्लोक: तब कहत भयो मंत्री को ये तो शब्द मधुर अविनी को
चलो इसको देखने चलिये, जहाँ होत मधुर गति वलये।।५३।।

अर्थ : राजकुमार मंत्री पुत्र को कहने लगा इन मधुर शब्दों की आवाज जंगल में से आ रही है। चलो देखें कि यह मधुर शब्द कहां से आ रहे हैं।

श्लोक: तब मंत्री पुत्र इम बोले ये तो भीम भीषण वन झोले
तुम कुमर को वन के मांही तहां जाना योग्य सो नाहीं।।५४।।

अर्थ : मंत्री पुत्र राजकुमार को कहने लगा कि हे राजकुमार! इस भीषण वन में रात्रि को जाना ठीक नहीं है।

श्लोक: हंस करके कुवर जब भनिया तुम कायर हमने जनियां
जो क्षत्रिय कुल में उपजा ताहे भय तो नहीं कछु करना।।५५।।

अर्थ : राजकुमार हंसकर कहने लगा कि तुम कायर हो। यह हमने जान लिया है। जिसने क्षत्रिय कुल में जन्म लिया है उसको किस बात का भय नहीं होता।

श्लोक: तब उठके चले दोनो मंत्री पुत्र और चित्रसेन
अनुस्वार शब्द के जाहि जाके दिल में कछु डर नाहीं।।५६।।

अर्थ : उसी समय दोनों उठकर चल दिये जिधर से आवाज सुनाई दे रही थी। उधर ही दोनो निडर होकर जा रहे हैं।

श्लोक: तहां जाकर कहा तब देखें प्रभु आदि को मन्दिर देखे
तहां भुवन के बीच जुं जाई जिनवर को नमन कराई।।५७।।

अर्थ : जब निकट जाकर देखा तो उन्हें आदिनाथ भगवान का जिन मन्दिर दिखाई दिया। उस मन्दिर में दोनों जाकर भगवान को नमस्कार करने लगे।

श्लोक: तहां गंधर्व गान कराई कस ताल सारंगी बजाई
अप्सरा नृत्य जु करती तन तन नन नन तान उचरती।।५८।।

अर्थ : वहाँ गंधर्व गीत गा रहे थे और कस, ताल, सारंगी बजा रहे थे। वहां पर अप्सरा नृत्य कर रही थी। तन-तन नन-नन रूप तान का उच्चारण हो रहा था।

श्लोक: तब नमन करै जुग जाके नहीं राग द्वेष मन काके
तब तीन प्रदक्षिणा दीनी बहु भांति सों स्तुति कीनी।।५६।।
ता थेई थेई थेई थेरी गावें, अष्टान्हिक पूजा रचावें
ऐसो कौ तिग मन्दिर देखो, श्री जिनको बिंब जु पेखो।।६०।।

अर्थ : वहां थेई-थेई रूप गान हो रहा है। वहां कोई अष्टान्हिका पूजा कर रहे थे। इस प्रकार वहां पर दोनों ने मन्दिर देखा और उस मन्दिर में जिनेन्द्र बिंब का अवलोकन किया। फिर दोनों ने भगवान को नमस्कार किया। उन भगवान को किसी से किसी प्रकार का राग-द्वेष नहीं है। ऐसे भगवान को तीन प्रदक्षिणा लगाकर नाना प्रकार की स्तुति की।

स्तुति

श्लोक: जै जै निराभर्ण शुभ संत। जै जै मुक्ति कामनी कंत
जै जै कोह सर्प हत मोर। जै जै कामविनासन बहुरि।।६१।।
जै जै कर्म विनासन हार। जै जै भवगीत सागर पार
जै जै कंदर्प गज दलन मृगेन्द्र। जै जै पूजित सुर देवेन्द्र।।६२।।
आज धन्य वा सुरधनवार। आज धन्य मेरो अवतार
आज धन्य मों नेन विसार। तुम स्वामी देखे जु निहार।।६३।।
शीश धन्य आज मौ भयो तुमरे चर्ण कमल को नमो
धन्य पाँव मेरे भये अवें। तुम लो आय पहुंतो जवें।।६४।।
आज हि मुख पवित्र मो भयो, रसना धन्य नाम जिन लियो।
आज ही मेरी दुख सब हरो। आज हि मो कलंक सब टरो।।६५।।
एहविध स्तुति कर्के जवै। सभा बीच बैठे फिर तवें।।६६।।

अर्थ : इस प्रकार भगवान की स्तुति करके सभा के बीच में बैठ गये।

श्लोक: पुनः अवलोके धरिनेह, आपस में सोधेरू करेह।
ऐसो रूप न नाग कुमार, नाहि विधाधर देखो सार।।६७।।

अर्थ : फिर वे आंखों से नेह लगा कर आपस में भगवान की ओर अपलक निहारने लगे और आपस में एक दूसरे को देखने लगे और कहने लगे कि ऐसा रूपवान तो न नाग कुमार ही होते हैं और न विद्याधर ही।

श्लोक: एतो कथन इंहा ही रहो, आगे और सुनो जो भयो।
ताहि भद्र एक पुतलि रची हीन करत मानो त्रिय सची।।६८।।

अर्थ : इतनी कथा आप यहां पढ़ चुके अब यहां पर हो रही आगे जो हुआ अब उसको कहता हूँ। वहाँ पर एक पुरुष ने एक सुन्दर इन्द्र को इन्द्राणी सची के समान की रूपवान पुतली बनाई।

दोहा

श्लोक: तिस पुतली को देखके कुमर गयो सुध भूल
काष्ट रूप धरनीपडयो मूर्छा में रहो कुल।।६९।।

अर्थ : उस सुन्दर पुतली को देखते ही चित्रसेन कुमार अपनी सुध-बुध खो बैठा और मूर्छा खाकर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

अडिल्ल

श्लोक: ताहि समें रत्नसार दृश्य देखके, शीतोपचार सुकियो बैठो हुवो फैर के। मूर्छा का तब कारण पूछो कुवार को ये पुतली किन करी रूप किस नार को।।७०।।

अर्थ : चित्रसेन को मूर्छित हुआ देखकर रत्नसार ने शीतोपचार किया तब कुमार की मूर्छा दूर हुई और कुमार बैठे हो गये। रत्नसार ने मित्र को पूछा कि हे मित्र! आप की दशा ऐसी क्यों हुई। मूर्छा आने का क्या कारण है। तब कुमार रत्नसार को कहने लगे कि ये पुतली किसने बनाई है और किस स्त्री का सुन्दर रूप है।

श्लोक: जिसके रूप से तै रची गई पुतली सही। सोई कुमारी ब्याह करूं जीवू सही।।७१।।

अर्थ : कुमार कहने लगा कि जिसका रूप लेकर यह सुन्दर पुतली (चित्र) बनाई है उस कुमारी के साथ मैं ब्याह करना चाहता हूँ। अगर वह मुझे नहीं मिली तो मेरा जीवन नष्ट हो जाएगा। मैं मर

जाऊँगा। अगर ये नारी मुझे नहीं मिली तो मैं आहार, पानी ग्रहण नहीं करूंगा। मैं अवश्य ही मर जाऊंगा। यह तुम जान लो मित्र।

श्लोक: तबहि कहे रत्नसार सुनो तुम मित्र जु ये तो गगन से पुष्प सुलायो आपजु
ऐसा कठिन जु कार्य तो तुम नहि सोचना जो होवे नहीं काम जो विरथा सोचना।।॥७२।।

अर्थ : तब रत्नसार कहने लगा, हे मित्र ! तुम सुनो ये तो आपने आकाश से पुष्प लाने की बात कही। ऐसा कठिन कार्य तुम मत सोचो, जो कार्य असम्भव है, उसके लिये परिश्रम करना व्यर्थ है।

गाथा

श्लोक: हियो मनोरह तंकरई जं करण ह असमथ
सग्गजतर वर मोरिया, ताहिप सारे हछ।॥७३।।

चौपाई

श्लोक: पूरव भाग्य उदै इन आए चार ज्ञान धारक मुनि आए
सहत मित्र के वंदन कीनी। बहुविधि नमन करी तिन की ।॥७४।।

अर्थ : पूर्व पुण्य के उदय आने से वहाँ पर चार ज्ञान के धारी मुनिराज पधारे। दोनों ने मुनिराज को बहुत-बहुत नमस्कार भक्ति पूर्वक किया।

श्लोक: वैसो शुद्ध भाव मुनिराई भव समुंद्र तारणहि बताई
ध्यावे चैय नगु मजु अनंदा तीनगु–पति पालन गुण मंडा।॥७५।।

अर्थ : शुद्ध भाव धारी मुनिराज भव समुद्र से तिरने का उपाय बताने वाले तीन गुप्ती का पालन करते हुये अपनी आत्मा का ध्यान करने वाले हैं।

श्लोक: शत्रु मित्र जाके इक सारा, मन के सब जिह तजे विकारा
बाईस परीषह सहन समथा। केहर दलन पंच मृग सथा।।॥७६।।

अर्थ : उन मुनिराज के शत्रु मित्र दोनों ही समान हैं जिन्होंने मन के सब विकारों को त्याग दिया है। जो बाईस परीषह को सहन करने वाले हैं। कामरूपी मृग का दलन करने के लिये मानो सिंह ही थे।

श्लोक: तीन प्रदक्षिणा दई समीपा नमस्कार कर कहो महीपा
स्वामी धर्म प्रकाशन कीजे, भव पातिग जा से हम छीजे।।७७।।

अर्थ : उन मुनिराज को चित्रसेन कुमार और उसके मित्र ने प्रथम तीन प्रदक्षिणा दी, नमस्कार किया और मुनिराज से विनती करी कि हे स्वामिन ! हम लोग संसार समुद्र में डूब रहे हैं। इसलिये हमें धर्मोपदेश दीजिये।

श्लोक: द्वेविध धर्म कहो मुनिराई, प्रथम साधु दूजै श्रावक भाई
पांच महाव्रत धारक जानों पंच सुमति आचार बखानो।।७८।।

अर्थ : तब मुनिराज ने धर्म पर उपदेश दिया और कहा धर्म दो प्रकार का होता है। प्रथम मुनिधर्म और दूसरा श्रावक धर्म। मुनिराज, मुनिधर्म के पांच महाव्रत और पांच समिति के धारण करने वाले होते हैं।

श्लोक: छः काया की रक्षा पाले सो ही साधु मुक्ति पग घालें
श्रावक धर्म सुनों चित लाई बारह व्रत तिन शुद्ध समुझाई।।७९।।
बाईस अभक्षन का त्याग जुकीजै, मुनि जन दान सदाचित दीजे
एसो धर्म कहो जिनराई सोमें प्रकट करो अब भाई।

अर्थ : छह काया की रक्षा करने वाला हो वही साधु मुक्ति के मार्ग में चल सकता है। अब श्रावक धर्म के बारे में कहता है तुम इसे मन लगा कर सुनो। फिर मुनिराज ने श्रावक के बारह व्रत बतायें और कहा बाईस अभक्ष का त्याग करो। मुनिराज को दान देने में मन लगाओ। इस प्रकार के धर्म को जिनराज ने कहा उसी धर्म को मैंने यहाँ कहा।

श्लोक: यह सुन धर्मजु बहु सुख मानो सुनके धर्मजु पूछ न ठानों
हे प्रभु ये पुतली किस कीनी किस अनुमान जु यह रंग भीनी।।८०।।

अर्थ : मुनिराज का उपदेश सुनकर मन को बहुत शान्ति मिली। फिर अपने मन की बात पूछने लगा। हे प्रभु ! ये पुतली का (चित्र) किसने बनाया और इसके बनाने के पीछे क्या कारण है।

श्लोक: यह वचन सुनके प्रभु बोले मन वच काय सुनो तुम बोलें
कंचनपुर एक नगर बखानों चार वर्ण कर युक्तें मानो।।८१।।

अर्थ : इस प्रकार का प्रश्न कुमार के मुख से सुनकर मुनिराज बोले कि हे कुमार! मन, वचन, काय तीनों योग लगाकर सुनो। कंचनपुर नाम का एक नगर है उस नगर में चार वर्ण के लोग रहते हैं।

श्लोक: कंचन कांति नगर की सो हैं देखत सुर नर को मन मोहे
चित्रकार तिस नगर बसायी गुणसारा तसु नाम बतायी।।८२।।

अर्थ : उस कंचनपुर नगर की कांति सोने के समान थी। नगर की शोभा को देखकर सुर और नर का मन भी मोहित हो जाता था। उस नगर में गुणसार नाम का एक चित्रकार था।

श्लोक: ताहित्रिया जु गुण श्रिय जानों, पंचपुत्र तिनके तुम मानों।
धनदेवें धनसार बतायों गुण देवों गुण आकर गायो।।८३।।

अर्थ : उसकी पत्नी का नाम गुणश्री है। गुणसार नाम के चित्रकार के पांच पुत्र हैं। धनदेव, धनसार, गुणदेव, गुणसार और सागर।

श्लोक: पंचम सागर नाम कहाई, सकल कलां को सागर गाई
पंच पुत्र विवाह जु कीनों जुदै–जुदै तिन सब कर दीनो।।८४।।

अर्थ : पांचवें पुत्र का नाम सागर है और वह सम्पूर्ण कला में परिपूर्ण है। उस चित्रकार ने पांचों ही पुत्रों का विवाह करके सबको अलग-अलग कर दिया।

श्लोक: सागर नाम पुत्र गुण लीनों जैनधर्म पालन परवीनो
ताहि प्रिया सत्यवती जानों जैन धर्म पालन पर मानो।।८५।।

अर्थ : उन पांचों पुत्रों में जो सागर नाम का पुत्र है वह जैन धर्म पालन करने में प्रवीण है। उसकी पत्नी का नाम सत्यवती है। वो भी धर्म की परिपालक है।

श्लोक: ये तो कथा रही इह ठाही आगे और सुनो तुम भाई
एक रत्नपुर नगर बखानों राजा पदम्रथा भिच जानो।।८६।।

अर्थ : यह कथा तो अब यहां ही रही, अब इसके आगे और भी कहता हूँ तुम सुनो भाई। एक रत्नपुर नगर है वहाँ का राजा पद्मरथ है।

श्लोकः रानी पद्मश्री याति सगाई सुनाति हैं पद्मावति भाई
युवा अवस्था प्राप्ते आई मानो अप्सरा स्वर्ग लजाई।।८७।।

अर्थ : राजा की रानी का नाम पद्मश्री था। पुत्री का नाम पद्मावति था। जब पुत्री युवा अवस्था में हुई तो मानो वह स्वर्ग की अप्सरा को भी लजाती थी।

श्लोकः बहुत गुणौ धति सै तुम जानो मानों सरस्वती तिसको मानो।
वर चिन्ता राजा को आई सुता किसें देऊं मैं माई।।८८।।

अर्थ : वह कन्या बहुत गुणों की खान थी। मानो वह साक्षात् सरस्वती का रूप है। जब राजा को अपनी पुत्री के वर की चिन्ता हुई और तब वह विचार करने लगा कि अपनी पुत्री की शादी किसके साथ करे।

श्लोकः कुलंच शीलं चस नाथ ताच, विद्या च वितं चवपूर्वश्र
एतान् गुणान् सप्तनिरीक्षेदेहा, अतः परंभाग्यवसा द्वि कन्या।।८९।।

चौपाई

श्लोकः ऐसे सोच राजा को भई, चित्र रूप पट लिखियो सही
सकल कुमार को लिखियों रूप तिने देख कुमारी रही चुप।।९०।।

अर्थ : इस प्रकार जब राजा को चिन्ता हुई तब चित्रपट लिखवाया। संपूर्ण राजकुमार का चित्र बनवाया। यह सब देखकर राजकुमारी चुप रही।

श्लोकः रूप किसूकों नाही रूचों, चीकन घटजिम बूंदहि नचो।
नानाचित्र दिखाये ताहि एक न तिसके मनहि सुहाई।।९१।।

अर्थ : फिर जब राजकुमारी को सम्पूर्ण राजकुमारों के चित्र दिखाये लेकिन उनमें से एक भी राजकुमारी के मन को नहीं भाया।

श्लोकः देखो विधना कहा निरभई, पुरुषद्वेषनी पुत्री भई
ये तो कथा इहांहि रही, आगे और सुनो जो भई।।९२।।

अर्थ : देखो विधि कैसी निर्दयी है। जो पुरुष द्वेषनी पुत्री हमको हुई है। ऐसा विचार राजा करता था। यह कथा यहां तक सुनी। आगे क्या हुआ सो और कहता हूँ।

श्लोकः सागर सूत्र धार को पुत्र, सकल कला कर जानो युक्त
शांतिनाथ की यात्रा करन, सहतमित्र आयो जिन भवन।।६३।।

अर्थ : सूत्रधार का पुत्र, सागर सब कलाओं में निपुण था व शांतिनाथ की यात्रा करने के लिये अपने मित्र के साथ जिन मंदिर में आया।

श्लोकः अष्ट प्रकारी पूजा करी, बहू विध स्त्रोत स्तबन बिस्तारी
तावत्पद्मावति तिहथान, सहत योषिता वृदं महान्।।६४।।

अर्थ : जिन मन्दिर में आकर अष्ट प्रकार की पूजा की और बहुत प्रकार के स्त्रोत व स्तवन विस्तार पूर्वक पढ़े। इतने में अनेक दासियों सहित पद्मावति वहां आयी।

श्लोकः स्त्री नर को भेष जुकियें, खड्ग हाथ में आगे लिये।
हम दूं कार शब्द कर रही, त्रासत लोकन आवत सही।।६५।।

अर्थ : स्त्रियाँ पुरुषों का भेष धारण कर हाथों में तलवार लिये आगे-आगे चल रहीं थीं। जोर-जोर से आवाजें करती हुई लोगों को डरा रहीं थीं।

श्लोकः तिनकर भयभीत जन हुवै, दसोदिशा को भागत भयें।
सागर एक कूवा में छिपो पश्य कुतूहल लहोवत जितो।।६६।।

अर्थ : इस प्रकार के दृश्य से सभी लोग भयभीत होकर दशो दिशाओं में भागने लगे। तब सागर शिल्पी कुंए में छिपकर सारा दृश्य देखने लगा।

श्लोकः तिसकै रूपतै मोहित भयो, सूत्रधार तव चिन्तित भयों
नाग कुमारी वा किन्नरी, विद्याधर के घर अवतरी।।६७।।

अर्थ : उस पद्मावति कुमारी के रूप को देखकर वह मोहित हो गया। सूत्रधार चिन्ता करने लगा कि ये राजकुमारी है या किन्नरी है या विद्याधर के घर में इसने जन्म लिया है।

श्लोकः विधना देखो ऐसी रची, सब गुण कर युक्तहि सचि
पुरुष द्वेषनी जामें दोष, सकल गुणदिता है जानो मोख। ।।६८।।

अर्थ : विधिता ने देखो सर्वगुण सम्पन्न संयुक्त ही इस कन्या की रचना की है। मात्र इसमें एक ही दोष है, जो पुरुष द्वैषनी है। बाकी गुण सब ठीक है।

अनुष्टयछेंद

श्लोकः यथादिनं बिना सूर्य विनादीपे न मंदिर
यथा कुलं बिना पुत्रं यथा भर्ता बिना स्त्रियां।।१।।
रूपयौवन संपन्ना विशालु कुल संभवा
भर्ताविना न सोभंते निर्गधं इवकिंशु का।।२।।

अर्थ : जैसे सूर्य के बिना दिन की शोभा नहीं, मंदिर की शोभा दीपक के बिना नहीं और कुल की शोभा पुत्र के बिना नहीं, इसी प्रकार स्त्री की शोभा पति के बिना नहीं होती है। जो रूप यौवन सहित है विशाला कुल सहित है तो भी भरता के पति बिना स्त्री की शोभा नहीं होती। जैसे गंध रहित फूल की शोभा नहीं होती है।
जो रूप यौवन से सहित है, विशाल कुल से सहित है तो भी भर्ता(पति) के बिना स्त्री की कही शोभा नही होती है।जैसे बंध सहित, फल की पूर्णिमा।

दोहा

श्लोकः ऐसे चितवन कीनियो सागर ने तिह वार।
करी नमन जिन शांति को गई ग्रहस्था चार।।३।।

अर्थ : इस प्रकार उस सूत्रधार सागर ने चिंतवन किया, फिर ग्रहस्था चार के अनुसार शांति प्रभु को नमस्कार किया।

श्लोकः यात्रा करके तू चढ़ी संघ पूज तीन कीन
फिर पिच्छै घर आईयो, सागर गुण कर लीन।।४।।

चौपाई

श्लोकः फिर मुनिवर इम कहन बनाई, सागर ने इह पुतली कराई
पद्मावति को रूप अनूपा, तिस मन ही और कोई न रूपा।।५।।

अर्थ : मुनीराज कहने लगे, हे कुमार उसी सूत्रधार सागर ने यह पुतली बनाई है। उस पद्मावति कुमारी का रूप अत्यंत सुन्दर है। उसके मन में और कोई रूप ही नहीं है।

श्लोकः सुन वृतांत पुतलि का भाई, राज नंदन तव मूर्छा खाई।
काष्ट की तुल्या गिरो तब ताहीं, तन–मन की कछु खबर जुनाही।।६।।

अर्थ : इस प्रकार वृतांत पुतलि (चित्र) का सुनकर राजकुमार मूर्छा खाकर जमीन पर गिर पड़ा और उसका शरीर काष्ट वत बनकर पड़ गया और तन-मन की सुध-बुध भूल गया।

श्लोकः रत्नसार उपचार जु कीनो, मित्र दुख कर दुखित किनो।
चेतरूप जब कुमार जब हुवो, रत्नसार मुनि पूछ न लाग्यो।।७।।

अर्थ : तब रत्नसार मित्र ने चित्रसेन कुमार का उपचार किया। उसके दुःख में वह भी दुखी हुआ। जब कुमार सचेत हुआ तो रत्नसार ने मुनिराज से पूछा।

श्लोकः हे भगवन मम मित्रं जु जानों, पुतलि देख मूर्छा गिर जानो।
सुन वृतांत मूर्छा फिर खाई, याही कारण कहित ये मुनिराई।।८।।

अर्थ : हे भगवान यह मेरा मित्र है। पहले पुतली को देखकर मूर्छित हो गया, फिर पुतली का वृतांत सुनकर मूर्छित हो गया। इसका क्या कारण है। मुनिराज सब कुछ स्पष्ट कहें।

श्लोकः तब मुनिवर इम जंपै भाऊ, चित लगाय सुनो तुम राऊ,
सुधा मधुर वानी तब बोले, सुख आतम को निरने खोले।।९।।

अर्थ : तब मुनिराज सुंमधुर वाणी में यों बोले, हे भव्य तुम सुनो, जिससे तुम्हारे मन में जो बात है, उसको कहता हूँ।

श्लोकः भरत क्षेत्र क्षेत्राणि सिर मोरा, ताहि देश द्राविड़ सिर गौरा,
नगर चंपापुर ताविध जानों, ताहि समीप चपक वन मानो।।१०।।

अर्थ : भरत क्षेत्र सब क्षेत्रों में उत्तम है। उस क्षेत्र में एक द्राविड देश है उस देश में चंपापुर नगर है। नगर की शोभा चंपा के वन से शोभित है।

श्लोक: चंपक शोक पुन्ना गलवंगा, अरगज जं–बुक अरू नारंगा।
सहकार द्राविड़ फल जानों, षट्रस फूल मध्य दिशा मानों।।११।।

अर्थ : उस वन में चंपा के वृक्ष, पुन्नाग के वृक्ष, अरगज, जामुन, नारंगी, आदि के वृक्ष हैं। उन वृक्षों पर अपनी ऋतु में फल-फूल लगते रहने से सुगन्धित होता रहता था।

श्लोक: नाहि वन एक सरोवर पेखो, जल निर्मल पूरित तुम देखो।
चतुर्कोन सोपानहि जानो, कमल का न, कर पूरित तुम मानो।।१२।।

अर्थ : उसमें एक निर्मल जल से परिपूर्ण सरोवर है। चारों कोनों में ही पानी भरा है, और सरोवर कमल के फूलों से परिपूर्ण था।

चौपाई

श्लोक: कल हंसा हंसन कर युक्त, चकवी–चकवा बहुत अनुकित,
सारस प्रमुख अन्य वहु जींव, क्रीड़ति ताहि किनारे अतीव।।१३।।

अर्थ : उस सरोवर के किनारे पर कलहंस, हंस चकवा, चकवी, सारस आदि बहुत से पक्षी क्रीड़ा कर रहे थे। ।

श्लोक: एक दिवस एक सेठ सु जान, यात्रा कर्न सौ जात महान्।
हुवो दुपहरो तिस को वहाँ, सर वर पास जुं ठहरो वहाँ।।१४।।

अर्थ : एक दिन एक सेठ यात्रा करने को निकला, और दुपहरी के समय में उस सरोवर के पास विश्राम के लिये ठहर गये।

श्लोक: प्रासुक जल कर स्नान जु कीन पूजहू जिनवर बिबं जु पूजह कीन।
भोजन अवसर हुवो जबे, देखन मुनिवर उठो तवे।।१५।।

अर्थ : प्रासुक जल से सेठ ने स्नान किया। फिर जिनेन्द्र भगवान की पूजा की। भोजन का समय होने पर वह मुनिराज को देखने लगा। वह इन्तजार करने लगा ।

श्लोक: सरके किनारे ठाढ़ो भयो, अतिथि मार्ग विलोकन लियो।
तिस के पुण्य योग कर जहाँ, मासो पवास मुनि आये तहाँ।।१६।।

अर्थ : सरोवर के किनारे खड़े होकर वह अतिथि का मार्ग देखने लगा। उसी समय उसके पुण्य से वहाँ पर मासोपवासी मुनिराज आये ।

श्लोक: आनंद हुवो बहुत मन मांही, वासनापुर भई तिह ठाहि।
प्रासुक जललें चरण प्रक्षाले, शुद्ध अन्न ले दियो गुनाल।।१७।।

अर्थ : मुनिराज को देखते ही, उस सेठ को बहुत आनन्द हुआ, उसकी इच्छा पूर्ण हुई। प्रासुक जल से मुनिराज के चरण प्रक्षालन किया, और मुनिराज को शुद्ध भोजन से आहार कराया ।

श्लोक: तिस ही वन वट वृक्ष सु जान, तापर हंस–हंस नी थान।
करी अनुमोदन तिन ने जहाँ, शुभ ही कर्म पार्जन किये तहाँ।।१८।।

अर्थ : उस वन में एक वट वृक्ष पर हंस और हंसनी का जोड़ा रहता था। उस जोड़े ने मुनिराज दान की अनुमोदना कर अपने शुभ कर्म उपार्जन किये। ।

श्लोक: सेठ गयो यात्रा को करन, आगे और सुनो ये वरन।
हंसनी तहाँ प्रसूते भई, अंड युग्म तहाँ पर निर्मभई।।१९।।

अर्थ : फिर सेठ ने वहाँ से यात्रा के लिए प्रस्थान कर दिया। आगे क्या हुआ सो कहता हूँ। सुनो, हंसनी वहाँ प्रसूता हुई, दो अंडों को एक साथ जन्म दिया ।

श्लोक: क्रम–क्रम कर सो बालक भये, पर्म स्नेह सुपोसत ठये।
अशुभ कर्म उदै भयों आय, बांस से बांस निघर्षो ताहि।।२०।।

अर्थ : क्रम से वह हंस के बच्चे बढ़ने लगे। उन बच्चों को हंस और हंसनी अति स्नेह से पालने लगे। कुछ समय के बाद अशुभ कर्म के उदय से, जंगल में बांस से बांस का घर्षण हो गया।

श्लोक: दावानल जा जुल्वजु हुई, वन में भयानक दीखत भई।
दावानल कर आकुल भये, हंसनी प्रतें हंसयो कहे।।२१।।

अर्थ : घर्षण से दावानल अग्नि प्रकट हो गयी, सारा वन अग्नि लगने से भयानक दिखने लगा, सारे जीव दावानल से व्याकुल हो गये। तब वृक्ष पर बैठ हंस हंसनी को कहने लगा।

श्लोक: मैं आपतकाल की रक्षा करूँ, जल लाय सरोवर भरूं,
यह सुनकर बोली हंसनी, मैं रक्षा करूं बालकतनी।।२२।।

अर्थ : मैं इस विपत्ति को दूर करूंगा और जल लायकर इस सरोवर को भरूंगा। यह सुनकर हंसनी ने कहा तब तक मैं इन बालकों की रक्षा करती हूँ।

श्लोक: पुत्र पाल ने माता रक्त, नाहि पिता की कहिये शक्ति।
इम कहकर हंसी तहांर ही, हंस चलो पानी के ताई।।२३।।

अर्थ : नीति भी यही कहती है कि पुत्र का पालन करने में माता ही सक्षम होती है। उसमें पिता की शक्ति का कोई काम नहीं। ऐसा जान कर हंसनी तो वहां ही रही, और हंस पानी लेने के लिये चला गया ।

श्लोक: पावत सर पै पहूंचत भयो, तावत कारन और हि ठयो,
हंसनी दावानल कर दही, ऐसे मन में चिंतत भई।।२४।।

अर्थ : हंस सरोवर पर पहुंच गया। इतने में अग्नि उस पेड़ के समीप आ गई। हंसनी दावानल में जल गई, जलती-जलती मन में ऐसा चिंतवन करती रही। ।

श्लोक: निःस्नेही कायर भयो हंस, छोड़ प्रवार गयो प्रसंस।
तिस कारन पुरूषहि जोई, निर्धन दयाहीन सब होय।।२५।।

अर्थ : हंसनी विचार करने लगी। देखो हंस कितना कायर हैं, जो हम को छोड़ कर चला गया। निःसन्देह नीतिकारों ने जो कहा है वह सत्य है। पुरूष बड़े दयाहीन व कठोर मन के होते हैं।

श्लोक: पापी दुष्ट चित इन जान, इनको मुख नहीं देखु प्राण।
मोह वसी संतान को होय, दुग्ध हुई ता ऊपर सोय।।२६।।

अर्थ : अब मैं उस पापी दुष्ट चित पुरूष का मुख भी नहीं देखूंगी, ऐसा विचार कर अपने बच्चों के मोह में दावानल में जलकर मर गई।

श्लोक: धर्म अनुमोदन को फल पाय, मनुष गति पाई सुख दाय,
रत्नपुरी नामाशुभ थान, पद्मा–मिधर राजा तिस जान।।२७।।

अर्थ : धर्म अनुमोदना के फल से वह मनुष्य जाति में पैदा हुई। एक *रत्नपुरी नाम की शुभ नगरी थी, वहाँ का राजा पद्माभिधर नाम* का था।

श्लोकः पद्मश्री ता स्त्रीयुता, पद्मावती जानोतिन सुता।
तिसको रूप जु ये निर्भयों, धृष्ट पूर्व तुम जानतहियो।।२८।।

अर्थ : उस राजा की एक पद्म श्री नाम की रानी थी। और उनको पद्मावति नाम की एक कन्या थी। उसी कन्या का यह रूप है और यह चित्र भी उसी का है, और यह पुतली भी उसी की है।

श्लोकः ये तो कथन यहाँ ही रहो, आगे और सुनो जो भयो।
जल लेकर जु हंस तहां आय, जहांसिक वट को वृक्ष जो थाय ।।२९।।

अर्थ : यहां तक तो आप सुन चुके अब आगे और कहता हूँ जो सुनो, फिर जब जल लेकर हंस वहां आया, जहां वह वट वृक्ष था।

श्लोकः तहां आकर सो देखत कहा, प्राणरहित हंसी हुई तहाँ।
मोह वसी होकर नहीं उठी, क्षुध हुई बच्चों पर बैठी।।३०।।

अर्थ : क्हाँ आकर देखने लगा कि प्राणरहित हंसनी हो गई है, मोह के वश में होकर अपने बच्चों पर ही बैठी रही, और जल कर मर गई।

श्लोकः ऐसो रूप लखो तिह जाम, प्रिया दुख अरू सुत दुख ताम।
हंस मोह के बस में हुवों, हदै फोड़ सो तहां ही मुवो।।३१।।

अर्थ : इस प्रकार अपने बच्चों को और प्रिया हंसनी की दशा देखकर, हंस मोह के वशीभूत हो गया और दुखित होकर के हृदय को फोडकर वह भी मर गया।

श्लोकः अनुमोदन के पुण्य प्रभावा, तु चित्रसेन हुवो है आय
मोहित हुवो मोहनी कर्म, जीव भूल जातो है धर्म।।३२।।

अर्थ : धर्म अनुमोदन के पुण्य प्रभाव से तू चित्रसेन हुआ है, मोहित हुआ जीव जब मोहिनी कर्म के प्रभाव में आ जाता है, तो वह धर्म भी भूल जाता है।

श्लोकः मूल चूल वृतांत जु सुनो, पूर्व भवन प्रभू जैसो भनो।
सुन के जाति सुमरन ज्ञान, हुवो मुनि जन वचन प्रधान।।३३।।

अर्थ : आद्योपान्त वृतांत कहता हूँ जैसा भगवान ने कहा है, पूर्व भवों *का, जब स्वयं को जाति स्मरण का ज्ञान हुआ, तब सब का सब* प्रत्यक्ष हो गया। जैसा कि मुनिराज ने कहा है।

श्लोकः पूरव भव को देखत सोय, हस्त ऊपर जिन आवल होय,
आनंद हुवो पूर्व भव सुनो, मुनि जन धर्म रूप सब भनो।।३४।।

अर्थ : पूर्व भव को देखते ही उसको अपने भवों का ज्ञान हो गया, फिर मुनिराज के मुख से सुनकर कुमार को और भी आनन्द हुआ।

पदुक्तंःधर्मे मति भर्वतिकिं वदु भाश्वेतेन,
जीवे दया भवति किं वदुभिप्रदानं।
शांतमनं भवति किं कण चतुष्टे,
रा रोगमस्ति विभवे वलान मस्ति।।३५।।

इति श्री जिनसेनाचार्य विरचितांया श्री चित्रसेन पद्मावती चरित्वे
चित्रसेन विदेश गमन पद्मावती पूर्वभव कथन, जाति स्मरण
ज्ञान नामा प्रथम अधिकारस्य भाषा टीका समाप्तः।
।इति प्रथमाधिकारः।

द्वितीय अधिकार

गीता छंद

श्लोकः प्रथमहि नमूं अरिहंत को छीयालिसे गुनों कर युक्त है
फिर सिद्ध वंदो अष्ट गुण आचार्य छत्तीस युक्त हैं।
उपाध्याय के पन वीस साधु के अठाईस मानिये।
सौ आठगुन की माला कहिए भव्य जीव सु जानिये।।१।।

अर्थ : प्रथम, मैं श्री अरिहन्त भगवान को नमस्कार करता हूँ जो छियालिस गुणों से युक्त है। आचार्य छत्तीस गुणों से युक्त है। मैं उनको भी नमस्कार करता हूँ। उपाध्याय भी पच्चीस गुणों के धारी हैं। अट्ठाईस गुणों के धारी साधु हैं। १०८ गुण के ६ ारी होने से माला भी १०८ दानें की होती है।

अड़िल छन्द

आगम उक्त प्रमान जु मुनिवर भाषियो।
सत्यरूप है मुनिवर तुम ने आखियो।।
पर किसंही पर कार मिलिये भामनी।
ऐसा जतन बतावो मुनिवर आपनी।।२।।

अर्थ : आगम से युक्त मुनिवर ने जैसा कहा वैसा भगवन आपने कहा, परन्तु कोई ऐसा उपाय बताओ जिससे ये स्त्री मुझे प्राप्त हो जाये।

श्लोकः मुनिवर ज्ञानी कहत भये सुन कुमार जी
पुरूष द्वेषनी जानो तिसका रूप जी
स्त्रीजन की स्तुति विषै लवलीन है।
मनुषन की प्रशंसा पर मन खीन है।।३।।

अर्थ : ज्ञानी मुनिवर कहने लगे कि हे कुमार तुम सुनो, यह स्त्री पुरूष से द्वेष करने वाली है, और स्त्री जन की प्रशंसा करने वाली है, और पुरुष की प्रशंसा सुनकर और भी चिढ़ जाती है।

श्लोकः *कुमरा पूछे स्वामिन ये कारन कहो।*
पुरूष द्वेषनी दोष जुतिन क्यों कर लहो।।

मुनिवर ऊँचे हंस जु जल लेने गयो।
हंसी पीछै ह्रदे सु इमचिंतित भयो।।४।।

अर्थ : कुमार मुनिराज से पूछने लगे कि हे स्वामिन मुझे कारण बताओ कि आखिर उस स्त्री को पुरूष द्वेष क्यों हुआ। मुनिवर कहने लगे, जब हंस पानी लेने गया, तब हंसनी पीछे से अपने मन में ऐसा विचार करने लगी।

श्लोक: निःस्नेही सो हंस सुतन गयो त्याग के, तिन को मुखय नंहि देखु भव–भव पाय कै
ऐसो कर निदान मुई सो हंसनी, तिस कर के तुम जानो पुरूष द्वेषनी।।५।।

अर्थ : निःस्नेहीहंस अपने बच्चों का भी त्याग करके चला गया। इसलिए पुरूष निर्दयी होते हैं। मैं भव-भव में भी पुरूष का मुख नहीं देखूंगी, ऐसा सोचते-सोचते ही वह निदान कर हंसनी मर गई, यही कारण है कि वह पुरूष द्वेषिनी हो गई।

श्लोक: पिछले भव के बैर सो जानिये, नर हि द्वेष सो निश्चेता मन मानिये। ऐसा सुनकर कुमार जु पूछे मुनिन को, पुरूष द्वैष किम जु दूर जु होवे कुमारी को।।६।।

अर्थ : पिछले भव के वैर के कारण ही वह स्त्री पुरूष का द्वैष करने लगी है। ऐसा सुनकर कुमार कहने लगा कि हे मुनिवर उसके मन से पुरूष द्वैष किस उपाय से दूर हो सकता है सो कहो।

श्लोक: तब मुनिवर इम कहें सुनो चित लाय कै, पूरव भव पट चित्र लिखो जुबनाय नाय
तिसको ताके सन्मुख कीजे जाय के, वैर दूर हो जाय जाति सुमर न पाय के।।७।।

अर्थ : तब मुनिराज कहने लगे कि हे कुमार सुनो मन लगाकर सुनो। एक पूर्व भव का चित्रपट लिखवाओ, और उस चित्रपट को उसके सामने रखो तब उसे जाति स्मरण हो जायेगा और पूर्व बैर नष्ट हो जायेगा।

श्लोकः ऐसो सुन वृतांत जु मन सुख मानियो, मुनिवर को सो वचन कुट
नहिं जानियो।
कर मुनिवर को नमन सुत व चलते हुवै, मित्र जू आनन्द तहाँ
करते भये।।८।।

अर्थ : ऐसा वृतांत सुनकर कुमार के मन में बहुत आनंद हुआ उसने यह मन में निश्चय कर लिया कि मुनिराज कभी झूठे वचन नहीं बोलते। मुनिराज को नमस्कार करके वहाँ से चले गये और दोनों मित्र आनंद मनाने लगे।

श्लोकः रत्नसार तु सुनो वचन मेरे सही, किह विथ पद्मावति मिलै मुझ
को वही,
मंत्री पुत्र जु कहै सुनो नृप कुवर जू, रत्नपुरी को चलो कार्य तुम
वन तजू ।।९।।
ऐसे निश्चित मन में होकर के सही, चलत भये सो देखत आश्चर्य न महि
कितने दिन के बीच जु तहां पहुंचत भये, रत्नपुरी तिस नाम नगर
कहते भये। ।।१०।।

चौपाई

श्लोकः आस–पास खातिका सुवान बहुत बावरी कुवा निवान
अरू तिह वाग खानें खरे, सघन दाख दारू द्रुमफरै।।११।।

अर्थ : ऐसे निश्चित मन से दोनों आश्चर्य चकित नहीं होते हुए पृथ्वी पर घूमते हुये कितने ही दिनों में रत्नपुरी नगरी को पहुँच गये।

श्लोकः उस नगर की शोभा अत्यन्त सुन्दर थी। नगर के आस–पास खातिका (खाई) थी। नगर में कुएँ, बावड़ी आदि थे। बगीचों से शोभायमान था। बगीचों में अंगूर, देवदार आदि के वृक्ष थे।
बहुत भांति अमृत फल रूख देखत जिनते लागे भूख,
फले नारियल अेव अभंग, बहुत करी नारंग शुरंग।।१२।।

अर्थ : उस बगीचे में बहुत वृक्ष आम के थे, जो फलों से परिपूर्ण थे, उनको देखते ही भूख लगने लगती मानो खाने की इच्छा होती थी। नारियल के पेड़ भी फलों से लदे हुए थे। पेड़ों पर नारंगी भी लगी हुई थी।

श्लोकः अगनित केला और खजूर, रहें विजोरे जहाँ तहाँ पूर
कुसुम कदम्बर है तहाँ फूल, रहै भ्रमर तिनके रस भूल।।१३।।

अर्थ : उस बाग में केला, खजूर, बिजोंरा के पेड़ भी फलों से पूर्ण थे। कदम्ब के पुष्पों पर भ्रमर झूम रहे थे।

श्लोकः योजन वास रही महकाय, तिहकी शोभा कही न जाय,
महां फूल फूले बहु भाई, जिसकी दस दिश महक सु जाय।।१४।।

अर्थ : उन पुष्पों की योजन तक सुगन्धी फैल रही थी। बगीचे की शोभा तो देखते ही बनती थी। वहाँ पर नाना प्रकार के फूल फल रहे थे, उनकी सुगन्धी दशों दिशाओं में महक रही थीं।

छन्द

श्लोकः केवरो के तुक मरूवो मोगरों अरूजाई। गुलाल कुजो आकर करनो रहो तहाँ महकाय।
मंजरी अरू जूह चम्पो राइवेल सुवास, पांडुर निवासे राई चंपो देखत वडै हुलास,
फूली चवेली सरखड़ी मचकुन्द शोभित फूल, अवर अनेक सुगन्ध नित्य बहुत फूले फूल।।१५।।

अर्थ : केवड़ा, मरूवा, मोगरा, जॉई, गुलाब, कुंज कनेर, इन सबकी मंजरी महकने लगी, चंपा, चमेली आदि नाना प्रकार के फूल फल लग रहे थे।

चौपाई

श्लोकः महाफूल फूले बहु भाई, सो कछु वर्णन कहो नहि जाई,
कोकिल केलत मधुरी भाख, सारौ सूवो अगिनत लाख।।१६।।

अर्थ : इस प्रकार नाना प्रकार के फूल फलादि से वृक्ष लद रहे थे, जिसका वर्णन किया नहीं जा सकता है। कोकिल आदि पक्षी मधुर शब्द करते हुये क्रीड़ा कर रहे थे।

श्लोकः पांडुक खुमरी अवर चकोर, कुहुँ–कुहुँ बोले बिच–बिच मोर,
जो सब पंखी वर्णन कहों, कहत कथाइक अंत न लहूँ।।१७।।

अर्थ : पांडुक, खुमरी, चकोंर आदि पक्षी, कुहु-२ बोल रहे थे, मयूर भी बोल रहे थे। अगर सब पक्षियों का वर्णन करने बैठूं तो कथा का कभी अन्त ही नहीं होगा।

श्लोक: और तहाँ जु सरोवर भले, मानो उमंग आप ही चले,
तिनमें अंबुज बहुत विशाल, लेत वांस लुवधे, अलिमाल।।१८।।

अर्थ : और वहाँ के सरोवर भी पानी से लबालब भरे थे मानों मन ही उमंग जाये। उन सरोवर में बहुत से कमल खिल रहे थे, और उन पर भौरें सुगन्ध ले रहे थे।

श्लोक: चकवी चकवा केल कराही, जल फूकरी तहाँ फहराई
जिनकी शोभित मधुरी चाल, रहें निकट बहु जुथ मराल।।१६।।

अर्थ : सरोवर के किनारें चकवा चकवी केली कर रहे थे। जल फूकरी फहरा रही थी, जिसकी चाल मधुर थी, जिनके निकट युथ रहते थे।

श्लोक: जलचर जीव रहें जहां जिते, वटै कथा जो वर्नोतिते।
है मनोग्य सवही विधखरी, मानो इन्द्रपुरी खिस परी।।२०।।

अर्थ : जलचर जीव वहाँ जितने रहते थे, कहाँ तक कहा जाये, इस प्रकार मनोज्ञ नगरी की रचना हुई मानो इन्द्रपुरी ही आ गई हो।

श्लोक: सोहें गृह सत खने आवास, द्वारे कन्चन कलश निवास।
घर–घर प्रति चौतरा सुठान, अति उज्ज्ल ते फटिक समान।।२१।।

अर्थ : उस नगर के महल सत खने थे। द्वार पर सोने के कलश लगे हुये थे, प्रत्येक घर के सामने स्फटिक के समान चबूतरा बना हुआ था।

श्लोक: बीच–बीच गुरू–गुरू बनो सुरंग, ते चमकित देखयो सुचंग।
घर–घर सवे लोक परधान, लखमीवन्त सर्वगुण जान।।२२।।

अर्थ : बीच में बड़े-बड़े सुरंग बने थे, प्रत्येक घर में सब लोग प्रधान थे, लक्ष्मी की वृष्टि तो सब घरों में थी मानो कोई दरिद्र ही नहीं था।

श्लोक: घर–घर सूर वेद धुनि करें, संस्कृत भाषा सब उच्चरे।
सामुद्रिक व्याकरण पुराण, घर ही किजे अर्थ बरवान।।२३।।

ज्योतिष अरू वैदिक गुण लीन, सब नर को कला परवीन,
सब को दया धर्म को परै, प्रशंसा काहु नहि करै।।२४।।

अर्थ : ज्योतिष शास्त्रादि में भी सब जानकार व कला प्रवीण थे, सब दया धर्म पालन करने में प्रवीण व परस्पर में एक दूसरे की प्रशंसा ही करते रहते थे।

श्लोक: अति रमणीक हाट बाजार, बसें तहाँ जु साह साधार।
वनजे नग निमेलिक चुनी, तिनको जस बोले सब दुनी।।२५।।

अर्थ : वहाँ के हाट-बाजार आदि बहुत रमणीक थे, सब जगह सेठ साहुकार ही बसते थे, उस नगर का यशगान वहाँ के पर्वतादि व वनादिक भी करते थे, फिर मनुष्य का तो कहना ही क्या।

श्लोक: कहा होय बालक पै खनो, जो कछु ताहि कहत नहि वनो।
कहुं–कहुं नाटक नाचें ठारू, कहुं–कहुं जांचे वहमन भाट।।२६।।

अर्थ : कहीं-कहीं नर बालक खेल रहे थे, कहीं-कहीं नाटक हो रहे थे, कहीं-कहीं ब्राह्मण भाट आदि बखान कर रहे थे, इन सबका और अब बखान नहीं कर सकते।

श्लोक: कुल छत्तिस वसै तहाँ लोय, कुल की रीत न छांडे कोय।
अपने–अपने वित सब सुखी तिह पर कोहु नाही दुखी।।२७।।

अर्थ : छत्तीस ही जातियाँ वहाँ थी। अपने-अपने कुल की रीति कोई नहीं छोड़ता था। अपने-अपने कार्य के अनुसार सब सुखी थे। वहाँ पर कोई दुःखी नहीं था।

श्लोक: क्रम–क्रम कर सों आये कहाँ, देखत सोभा गोपुर जहां।
तिन के पास यक्ष एक थान, नाम धनदतिंह को तुम जान।।२८।।

अर्थ : क्रम-क्रम से घूमते हुये सारे नगर की शोभा देखने लगे। वहां पर एक स्थान पर धनद यक्ष का स्थान था।

श्लोक: तिस मंदिर में दोनों गये, रात वसेरो करते भये।
कृष्ण चतुर्दशी ता दिन जान निसि दो याम गई तिह ढाम।।२९।।

अर्थ : उस यक्ष के मन्दिर में दोनों जने गये, और रात भर उस मन्दिर में वसेरा के लिये रह गये। शुभोपयोग से उस दिन कृष्ण

चतुर्दशी का दिन था, आधी रात बीत जाने के बाद।

श्लोक: किन्नर भूत प्रेत राक्षसी, मास–मास यात्रार्थ हि हसी,
नव नाटक हि नृत्य वाजित्र गायन विद्या करत पवित्र।।३०।।

अर्थ : किन्नर भूत-प्रेत राक्षसी की प्रत्येक महीने में यात्रा भरती थी। उस यात्रा में नये-नये नाटक, नृत्य आदि हो रहे थे, बाजे बज रहे थे, गायन हो रहे थे, नाना प्रकार की कला का प्रदर्शन हो रहा था।

श्लोक: ध्वनि मृदंग हुई जवी, चित्रसेन जागृत हुवो तबी।
दृष्टा सभा युक्त श्रृंगार नाचत गावत विविध अपार।।३१।।

अर्थ : जब मृदंग की ध्वनि बजने लगी, तब चित्रसेन की नींद जागृत हो गई और देखा तो कहीं सभा लगी है कोई नाच रहा है, कोई गा रहा है।

श्लोक: केइक बीना ले संचित, गावत मधुर स्वरनि संगीत।
बाजत ताल मृदंग कसाल, नाटक भेष धरहि जु विसाल ।।३२।।

अर्थ : कोई वीणा बजा कर संगीत कर रहा था, कोई मधुर स्वरों में गा रहा था, कहीं बाजों की सुर ताल लग रही थी, मृदंग आदि बज रहे थे। नाना प्रकार के भेष धर कर लोग नाटक कर रहे थे।

श्लोक: कौतिग चित्र उठो कुमार, हाथ बीच लीनी तलवार,
जाय यक्ष को वंदन करी, बहु विध स्तुति ताहि विस्तरी।।३३।।

अर्थ : चित्रसेन कौतुकता से उठ कर हाथ में तलवार लेकर वहाँ गया, और यक्ष को वन्दन कर बहुत प्रकार से स्तुति करी।

(राग जकड़ी)

श्लोक: देवादिक यक्ष जु चकित भये, मन मांही अेसे कहत भये।
ये कौन पुरुष यहाँ आयो सही, इस सदृश्य स्वरूप जु किसे नहीं।।३३।।

अर्थ : देवादिक यक्ष सब आश्चर्य में पड़ गये, और मन में ऐसे विचार करने लगे। ये कौन पुरुष यहाँ आ गया, इस के समान रूपवान और कोई नहीं है।

टेक :–तब यक्ष धनं जय कहत भये, ये प्राघूर्ण कम ममंद्र–ठये।
यह सुनकर कुमर जु कहत भयो, सेवा को तुमरी आन रहे।।
यह सुनकर यक्ष प्रसन्न भयो, फिर कुमरां से तब कहत भयो।
जो वर माँगों सो देऊ तुमें, अब काहे मन में सोच गहो।
यक्ष वचन इम सुन करके पद पंकज पद लवलीन भये।
देवादिक यक्ष।।३४।।

अर्थ : तब यक्ष धनंजय ऐसा कहने लगा कि तुम्हारा यहाँ क्या काम है। यहाँ क्यों आये, यह सुनकर कुमार कहने लगा कि- हे देव! मैं तुम्हारी सेवा के लिये यहाँ आया हूँ, तब कुमार की बात सुनकर यक्ष बहुत प्रसन्न हुआ और कुमार को कहने लगा कि मांगो, क्या मांगते हो। मैं तुम पर बहुत प्रसन्न हूँ जो मांगोगे सो देता हूँ, मन में कुछ भी विचार मत करो, यह सब बात यक्ष के मुँह से सुनकर कुमार बहुत प्रसन्न हुआ।

श्लोक: कर अंजुलि जोड़ जु ऐसे कही, अब सफल भयो मेरो जन्म सही,
अब सफल क्रिया अरू वाच मैरो जब दरशन तुमरो हुवो सही
विनय युक्त जो कुमार को देख लिया, तब ये वर तिस को देत भयो।
मद्वचनहितुल्य परशादेन रण देख के शत्रु ने भय जु किया।
तुमसे नहिं जीतै शत्रु कोई, ये वचन जु हमने तुमको दिये।।३५।।

अर्थ : हाथ जोड़ कर कुमार ऐसे कहने लगा, अब मेरा जन्म सफल हो गया, अब मेरा वचन और क्रिया सफल हो गई, क्योंकि मुझे आपके दर्शन हो गये हैं। इस प्रकार विनय युक्त कुमार को देखकर यक्ष कुमार को वरदान देने लगा। मेरे आशीर्वाद से युद्ध भूमि में जब तुमको शत्रु देख लेगा तो देखते ही वह भयभीत हो जायेगा और तुम्हारी ही जीत होगी, शत्रु की जीत कभी भी नहीं होगी।

श्लोक: वर लब्ध कुमार बहु विनय करी, सब मित्र पास आ उच्चरी,
जो वर पाया था कुमरा ने, कछु किंचित नहिं तिन गोय करी,

जब सभा विसर्ज हुई वहां से, तब दूर हुई विभावारी
सह मित्र जु तहां से चलत भये, मन मांही ऐसे विचार करी,
तब चलत–चलत चौराहे में, आकर के तहां जब स्थिति भये।।३६।।

अर्थ : ऐसे अनमोल वर को प्राप्त करके बहुत विनयपूर्वक सब मित्र ऐसे कहने लगे, जो वर कुमार ने पाया, उस पर तनिक भी गौर नहीं किया। सभा विसर्जन होने के बाद सब अपने-अपने स्थान को चले गये, मित्रों के साथ चलते हुये ऐसे विचार करने लगे, सह मित्र के साथ जब वह चौराहे पर आ गये तब क्या हुआ।

श्लोकः तिस अवसर पद्मरथहि राजा, मन एसो विचार कियो जु तबे,
सब नगर विषें सो ऐसे कही, पट घोखन देकर तहां जवै।
जो कोई पुरूष इसका वो द्वेष, आ कर्के दूर करेंहि अवें,
तिस अर्द्ध राज अरू पुत्री देऊं, इसमें तो झूठ नहीं है कबे।
ये सुन करके पट घोखन को मन मांही हर्ष जु बहुत भये।
देवादिक यक्ष जु चकित भये।।३७।।

अर्थ : उसी समय पद्म रथ राजा ने मन में विचार करा और सारे नगर में एक सूचना करवाई। जो कोई पुरुष मेरी कन्या पद्मावती का पुरुष द्वेष नष्ट करेगा, उसको मैं अपना आधा राज्य और अपनी पुत्री का ब्याह उससे कर दूंगा। इस प्रकार की सूचना सुनकर मन में सभी मित्र बहुत प्रसन्न हुये।

चौपाई

श्लोकः सुन करके पट घोष निनाद, दूर हुवो तिनको परमाद्।
रत्न सार के मुख को देख, कहत कुमार मित्र तूं येख।।३८।।

अर्थ : इस प्रकार की सूचना को सुनकर कुमार का प्रमाद दूर हो गया, और रत्नसार के मुख को देखकर कहने लगा, कुमार मित्र अब तू देख।

श्लोकः वांछित अर्थ सिद्ध हुये अवें, पुण्य उदें ते पावें सबें।
मित्र सहाय आज सब हुवो, कार्यों पाया सिद्धहि थयो।।३९।।

अर्थ : मेरा इच्छित कार्य अब सिद्ध हो गया, मेरा पुण्य उदय आ गया है। हे मित्र! तुम्हारी सहायता से आज सब कार्य मेरा सिद्ध हो गया।

श्लोक: ऐसे कुमार जानकर जवें, ज्ञानी वचन जु सुमरे तवें,
चित्रकार के पास जु जाय, चित्रहि रूप लिखायो ताय।।४०।।

अर्थ : इस प्रकार सोचकर ज्ञानियों के वचन कुमार स्मरण करने लगा, और उसी समय एक चित्रकार के पास जाकर चित्र लिखवाया।

श्लोक: चित्र लेख जब कर में लियो, गुप्त भेष तवहीं तिन कियो।
गायन कला नगर में धरे, चित्र लेय सब आगे धरें।।४१।।

अर्थ : गुप्त भेष धारण कर चित्र को हाथ में लेकर गायन गीत गाते हुये वह चित्र को सबको दिखाने लगा।

श्लोक: तिनकी गान कला को देख, चित्र रूप अद्‌भुत तिन पेख,
सब नगरी में प्रशंसा भई, राजमहल में वार्ता गई।।४२।।

अर्थ : उनकी गीत कला को देखकर और चित्र की अद्‌भुता को देखकर सारे नगर में प्रशंसा होने लगी, और यह बात राजमहल में भी पहुँच गई।

श्लोक: सुन तिनकी प्रशंसा तवें, पद्‌मावती मोहित भई जवें।
पूरव स्नेह वंध तिन कियो, पास कुमार बुलाय जु लियो।।४३।।

अर्थ : इस प्रकार की प्रशंसा प्रजाजनों के मुख से सुनकर पद्‌मावती मोहित हो गई। पूर्व स्नेह से जो बंध किया था, उसी के कारण कुमार को अपने पास बुला लिया।

श्लोक: दर्शन मात्र कुमार के जवें, हृदैं नु राग उपजो तवें।
तवहि सखी जु विचारत भई, परस–परस मन में यों ठई।।४४।।

अर्थ : कुमार के दर्शन होते ही, पद्‌मावती के हृदय में कुमार के प्रति अनुराग उत्पन्न हो गया, तब पद्‌मावती कुमारी की सखी ऐसा विचार करने लगी, आज क्या बात है, सखी का स्वभाव कैसे बदल रहा है।

श्लोक: ये पुरुष ने आकर अवी पुरुष द्वेष दूरहिं कियो सवी,
चित्र पट लेख देखत भई गहवर कानन में चित ठई।।४५।।

अर्थ : इस पुरुष ने आकर ऐसा क्या जादू किया कि कुमारी का पुरुष द्वेष ही दूर हो गया। पद्मावती कुमारी ने जब चित्रपट लेकर देखा तो वह मन में गहन विचार करने लगी।

श्लोक: बहुत पंक जौर कर सो युक्त, मानसरोवर देखो उक्त,
तत्रासन वट वृक्ष जु जान, बहुत विहग संयुक्त महान्।।४६।।

अर्थ : बहुत सोच विचार के बाद उसने देखा कि एक जंगल है, उस जंगल में मानसरोवर है, एक तरफ वट वृक्ष बना हुआ है, बड़ा ही विहंगम चित्र है।

श्लोक: तहाँ हँस हँसनी सुजान, आलक वनो हुवो तिह्थान।
तबहि तहा दावानल लगी, हंसनी सहत पुत्र तहां दगी।।४७।।

अर्थ : वहाँ हंस-हंसनी एक वृक्ष पर बैठे हैं, उसी समय दावानल लग गया (अग्नि लग गई) हंसनी सहित दोनों बच्चे भी जल गये ऐसा उस चित्रपट में दिखाया।

श्लोक: हंस गयो पानी की आस, आकर देखो पत्य विनास।
हंस प्रियाका किया वियोग, जंपा पात कियो कर सोग।।४८।।

अर्थ : हंस पानी लेने के लिये गया हुआ है। पानी लेकर वापस आने पर देखा कि पत्नी सहित दोनों बच्चे भी आग में जल गये हैं, तब हंस को बहुत दुःख हुआ। वियोग से उसने भी उस दावानल में पहुँचकर अपने प्राण त्याग दिये।

श्लोक: होय स्नेह के वस में जवी, मरयो हंस हंसनी मोह तवी।
ऐसो चित्र लखो तिह ठाम जाती सुमरन उपजो ताम।।४९।।

अर्थ : जब स्नेह के वश में हंस हो गया तो उसने भी वहीं अपने प्राण त्याग दिये। ऐसा चित्र चित्रपट में जब कुमारी ने देखा तो उसको जाति स्मरण का ज्ञान हो गया।

श्लोक: मूर्च्छा आकुल होकर चित्त, पृथ्वी ऊपर गिरी अचित।
सखी शीतल जलहि कर तवै, करी सचेत जु सोचें जबें।।५०।।

अर्थ : फिर वह कुमारी मूर्च्छा खाकर जमीन पर गिर पड़ी, अचेत हो गई, उसी समय उसकी सखी ने शीतल जल डालकर उसको सचेत किया। तब वह विचार करने लगी।

श्लोक: मद्वियोग मरियो सो हंस, स्नेह वसी होकर पर संस।
मूरख भाव होय कर दीन, पुरुष द्वेष नाहक में कीन।।५१।।

अर्थ : देखो हंस मेरे वियोग में मर गया। उसकी कितनी प्रीति मेरे प्रति थी। मैं व्यर्थ में ही पुरुष से द्वेष करती हूँ। मैं भी मूर्ख हूँ।

श्लोक: ये जो चित्र धार है, सरस, हंस जीव निश्चैमुज परस।
सखी साथ यह वार्ता करी, चित लगाय ताहि उच्चरी।।५२।।

अर्थ : यह जो चित्र लेकर आया है निश्चय से यही हंस का जीव है, और वह अपनी सब बात सखी को कहने लगी।

श्लोक: तावत कुमार जु छिपकर तहां मित्र पास आयो सो वहां।
तबहि कुमारी दस दिश देख, नहीं कुमर को तहां पर पेख।।५३।।

अर्थ : इतने में कुमार छिपकर वहाँ से अपने मित्र रत्नसार के पास आ गया। कुमारी उसे चारों तरफ देखने लगी लेकिन कुमार वहाँ पर नजर नहीं आया।

श्लोक: बहुत रूदन तब तिसमें कीन, करत विलाप महां अति दीन।
चित चुराय जु मो ले गयो हाय–हाय धूर्त हि ठग गयो।।५४।।

अर्थ : जब कुमार वहाँ पर नहीं दिखा तो कुमारी जोर-जोर से रूदन करने लगी। हाय मेरा चित्त चुरा कर कुमार ले गया, धूर्त मेरे को ठग कर चला गया।

श्लोक: मम वत्सल हर गयो दीन, हा सखी कहां गयो परवीन
महाधूर्त धूर्तन सिर मोर, मो मन को ले गयो है चोर।।५५।।

अर्थ : मेरा वत्सल मन को हर गया। हे सखी वह परवीन कहाँ चला गया। वह धूर्तों का भी धूर्त है, मेरे मन को हरण करने वाला चोर है।

श्लोक: वसि उण भव हियए, जीवंगहि ऊण कथं चलि उसि,
सह वंस घसि उवण गंगमिग उडषभहसी।।५६।।

चौपाई

श्लोकः ऐसे विलख वदन मन भई भर्ता दुख कर दुखित भई।
मधुर वचन कर सखी समुझाय, बहुत बात को कहै बैठाय।।५७।।

अर्थ : जब पद्मावती बिलखती हुई मन में भर्ता(पति) के प्रति बहुत दुखी होने लगी, तब मधुर वचन बोलकर सखी बहुत बातों से समझाने लगी।

श्लोकः कन्या व्यथा जान कर जबै करी खबर राजा को तबै।
तब ही स्वयंवर मंडप रच्यों, सर्व सामग्री युक्त जु खचो।।५८।।

अर्थ : जब सखी ने कुमारी पद्मावती को बहुत दुखी देखा तब राजा को इसकी सूचना कर दी। राजा ने स्वयंवर मंडप की रचना करवादी और सभी प्रकार की तैयारी कर दी।

श्लोकः देश–देश सेवक भेजियो, भूप पुत्र आदेशन कियो,
नाना देश भूप तहां आई पद्मावती मंडप जहां थाय।।५९।।

अर्थ : देश-देशान्तर में सेवकों को भेजकर सभी राजाओं के राजकुमारों को वहाँ बुलवा लिया, जहाँ पद्मावति राजकुमारी के लिए मंडप बनाया गया था।

श्लोकः धार श्रृंगार मधुप गुंजार गर्व धरो मन मांहि अपार,
हस्ति हय, रथ, पायक घने, चार प्रकार चमू युत वने।।६०।।

अर्थ : सभी राजकुमार श्रृंगार को धारण करते हुए गुंजार करते हुए मन में अहंकार को धारण करते हुये, हाथी, घोड़ा, रथ पैदल आदि सेना से युक्त थे।

श्लोकः चलत भये निज अस्थान, रत्नपुरहिं आये मद ठान,
नाना कौतुक देखत भये, भूमि उद्यान में ठहरत भये।।६१।।

अर्थ : अपने-अपने नगरों से चलकर सब ही रत्नपुरी आ गये। नाना प्रकार के कौतुक को देखते हुए नगर के उद्यान में आकर ठहर गये।

श्लोकः तहां स्वयंवर वनियो इसो, सुरपुर सोभावर नत जिसो।
पंचाली कर युक्त महान पंच वर्णन तिन किये बखान।।६२।।

अर्थ : वहाँ स्वयंवर मंडप की ऐसी रचना हुई थी, मानो स्वर्ग ही जमीन पर आ गया। पंचाली कर युक्त पंच वर्णों में बखान किया जा रहा था।

श्लोक: महामनोहर पंक्ति जान, सिंहासन किने अनुमान,
सर्व सामग्री तहां पर वसी ब्याह कार्य में होवत जिसी।।६३।।

अर्थ : महामनोहर पंक्तियों की रचना की गई थी। अच्छे-अच्छे सिंहासन लगाये गये थे, सब प्रकार की सामग्री वहां लगी थी। जैसी ब्याह-शादी में आवश्यकता होती है।

श्लोक: कर्पूरागर मृग मद जान, तिन कर युक्त जु धूप बखान,
नाना विधहि पुष्प तहां रचे, सबन पुष्प मानो सुर खचै।।६४।।

अर्थ : कपूर, कस्तूरी, आदि धूप से युक्त था, नाना प्रकार के पुष्प मालाओं से मण्डप रचा गया था, मानो वह देव पुष्पो के से ही बनाया गया हो।

श्लोक: सबहि भूप देखे अवलोकं, वनोमनोहर मंडप चोंक।
गौरव करो सबहि नृप आप, पद्मरथहि आदर सुपठाय।।६५।।

अर्थ : सबही राजाओं ने मण्डप का अवलोकन किया। सुन्दर स्वयंवर मण्डप की रचना देखकर सब प्रशंसा करने लगे। पद्मरथ राजा ने भी सबको आदर पूर्वक आवास गृहों में विश्राम के लिए भेज दिया।

श्लोक: शुभ अन्हिराजा तहाँ जवैं, बैठे मंडप आकर सवें।
और शोभा आढ़ा शृंगार हि इष्ट, सिंहासन सवहिं उपविष्ट।।६६।।

अर्थ : सब राजा मंडप में आकर, सिंहासन पर बैठ गए। जो अच्छे शृंगार किए हुये थे।

श्लोक: कही गीत कही नृत्य जु होय, संगीतादिक गावत सोय।
कहुँ वाजित्र घोषत हां बजें, नाना भेष रूप तहाँ सजे।।६७।।

अर्थ : कहीं पर गीत गाए जा रहे थे। वहीं संगीत हो रहे थे, कहीं बाजे बज रहे थे, नाना प्रकार के मंगलोत्सव वहां पर हो रहे थे।

श्लोक: पद्मरथ हि राजा तब चयो, विनय युक्त तब कहत जु भयो।
वज्र जू सर ये धनुष महान, क्रम कुलममहि कियो व्याख्यान।।६८।।

अर्थ : तब पद्मरथ राजा विनय युक्त होकर सब को ऐसा कहने लगा कि यह मेरे धनुष और बाण है जो वज्र के समान है, ये मेरी वंश परम्परा से चले आए हैं।

श्लोक: मंडप विषे ये है मम चाप, जो कोई भूप आ रोपे आप,
परनै पुत्री नहिं संदेह, मन वांछित पावे धरि नेह।।६९।।

अर्थ : यह धनुष और बाण जो इस मंडप में रखे हुये हैं इनको जो कोई राजा धनुष पर बाण चढ़ा देगा, उसको मन वांछित धन के साथ, मेरी पद्मावती पुत्री भी दे दूँगा, अर्थात् उसके साथ ब्याह कर दूँगा।

श्लोक: यह सुनत वहि सवें भूपाल, मन में बहुत भये खुशिहाल,
धनुर्वेद विद्याकर युक्त, दीन धनुष कहा रोपन उक्त।।७०।।

अर्थ : ऐसा सुनकर सभी राजाओं को मन में बहुत खुशी हो गयी। राजा धनुर्वेद विद्या से युक्त थे, खुश हुए, धनुषारोहण का कार्य दीन-हीन लोगों का नहीं है।।७०।।

श्लोक: अथपद्मावति कन्या जान, शृंगारहि षोडसजु करत महान।
सखी वृन्द कर आवत भई, दश दिश जोति प्रगट तहा भई।।७१।।
स्वर्ण कंव हाथ हि जू लई, नैत्र धारतवसाथहि भई।
गुंथित सद्य पुष्प ले माल, आवत भई हँस की चाल।।७२।।

अर्थ : पद्मावती कन्या षोड़स शृंगार करके सखियों के साथ दशों दिशाओं में प्रकाश फैलाते हुई जिसके हाथ में सोने की छड़ी है ऐसी नेत्र धारिणी के साथ हाथ में पुष्प माला लेकर हंस की चाल से सभा मंडप में आ गई।

अनुष्टपछंद

श्लोक: यथांधकारे सदीपं, भुवनं पोतते धूवं
तथा पद्मावती कन्या, प्रदीपं मंडपे कृतं।।७३।।

अर्थ : जिस प्रकार अंधकार में दीपक प्रकाश करता है उसी प्रकार पद्मावती कन्या के स्वयंवर मंडप में आने से प्रकाश होने लगा।

चौपाई

श्लोक: मंडप धनुष जु हष्ट पराई, मन में असो विचार कराई,
वल्लभ मो सुकुमाल बताई, किस प्रकार पूर्य मम सांई।।७४।।

अर्थ : मंडप में जब धनुष को देखा, तब मन में ऐसा विचार करने लगी कि मेरा होने वाला पति कैसे यह कार्य करेगा।

श्लोक: ये चिंता जब कुमार को आई, तावत्कथन और सुनो भाई।
बजे वाजित्र द्वादश ध्वन छाई, सब मंडप गुंजार कराई।।७५।।

अर्थ : इस प्रकार का विचार कुमार भी करने लगा, तब तक और जो हुआ सो कहता हूँ। सारे मंडप को गुंजार करने वाले बाजे बजने लगे।

श्लोक: सावधान नृपत वही हुए, तवे सिंहासन बैठत भये।
वृद्धावलिवर्नन तहाँ करी, सकल भूप मन आनन्द धरी।।७६।।

अर्थ : सब राजा सावधान होकर सिंहासन पर बैठ गए, भाटों ने वृद्धावलि गाया सब ही राजा आनन्दित हुए।

श्लोक: लाटाधिप प्रथम ही उठीयो, वरन कुमारी इच्छा कियो
बाहु सभारन इच्छा करी, कन्या लंपट इच्छाधारी।।७७।।

अर्थ : प्रथम-लाट देश के राजा ने कन्या के विवाह की इच्छा प्रकट करते हुए बाहुओं को संभाल कर अपना रूप कन्या को दिखाया।

श्लोक: यावत धनुदिश जावत भयो, मूर्छा आकुल भूपति थयो।
धनुष रूप जब देखन लगो, अंधकार राजा को ठयो।।७८।।

अर्थ : जब धनुष की तरफ जाने लगा, तो धनुष को देखते ही आकुल-व्याकुल होकर मूर्छित हो गया।

श्लोक: सर्व सभानब हसनी भई, परस्पर ताल वहां तब ढई,
लज्जा नम्र हुओ भूपाल, सिंहासन बैठियो गुनाल।।७९।।

अर्थ : सर्व सभा एकदम हंसती हुई परस्पर ताली बजाने लगी। तब लाट देश के राजा लज्जा से मुँह नीचा कर वापस अपने आसन पर बैठ गया।

श्लोकः कर्ण राज तब उठियो तहाँ, भूजंहि पराक्रम उठियो महां।
तवहि फणा टोप पेखियो, महारूद्रशेष हिऐखियो।।८०।।

अर्थ : यह देख कर कर्ण राजा उठा, अपने भुजा का पराक्रम दिखाने के लिए, तब ही उसे धनुष का फणा टोप उसको दिखने लगा। वह महान भयानक था।

श्लोकः मानहीन होकर तिसचित्त, नहीं चढ़ो सो धनुष्य पवित्र,
हांसी सब जन कर्ते भये, नम्र मुखी आसन पर ठये।।८१।।

अर्थ : उसको देखते ही कर्ण राजा मान हीन हो गया। उससे भी धनुष नहीं चढ़ा। तब सब लोग हंसी करने लगे। राजा नम्र मुखी होकर अपने आसन पर जाकर बैठ गया।

श्लोकः काश्मीराधिपती तब उठो, मानो काल सबनि को रूठो
कहा धनुष रोपण की बात, हास्य रूप मम आगे भ्रात।।८२।।

अर्थ : फिर कश्मीर के राजा तब उठे, मानो सबका काल ही आ गया हो। धनुष चढ़ाने की बात तो जाने दो और वह भी हास्य के पात्र बने।

श्लोकः ऐसे मान धरोमन जवे, चलत भयो आगे की तवें।
देवाधिष्ठित तब वही आए, ज्वाला कुलर चियोतिस ढॉय।।८३।।

अर्थ : इस प्रकार वह राजा मानी होकर धनुष चढ़ाने चला, लेकिन देवाधिष्ठित धनुष होने के कारण वह धनुष को नहीं उठा सका और वह धनुष ज्वाला उगलने लगा।

श्लोकः भंयकर युक्त भयो नृप जवें सकल सभा हसियो तित तवें।
लज्जा युक्त मुख ताको भये, निज आसन तब बैठनलयो।।८४।।

अर्थ : इस प्रकार धनुष का आकार देखकर राजा डर गया और लज्जा से उसका मुख नीचा हो गया। तब सारी सभा हंस पड़ी और राजा चुपचाप आकर अपने आसन पर बैठ गया।

श्लोकः तबहि पदमरथ जिय इम धरी, चिंता आकुलता विस्तरी।
जो पूरन नंहि सर को करे, ममपूंत्री को कोनहि वरै।।८५।।

अर्थ : तब पद्म रथ राजा यह सब देखकर मन में चिंता करने लगा, मेरी पुत्री से ब्याह कोई नहीं करेगा। क्योंकि कोई भी धनुष के निकट भी नहीं जा पा रहा है।

श्लोक: तबहि कुमारी चिंतवन कियो, प्रान वल्लभ नहीं आवन भयो।
निश्चे अभाग्य रूप मम जान, स्वयंवर नांहि हुयो प्रधान।।८६।।

अर्थ : पद्मावती कुमारी भी इस प्रकार चितंवन करने लगी कि मेरे प्राणवल्लभ अभी तक नहीं आए, निश्चय से मैं अभागिन हूँ और स्वयंवर भी व्यर्थ हो रहा है।

श्लोक: ऐसी कुमारी सोचती भई, गुप्त भेष देखत तब भई,
मित्र युक्त भर्ता को देख, मन में आनन्द भयो विशेष।।८७।।

अर्थ : ऐसा विचार कुमारी कर ही रही थी कि इतने में अपने पति को गुप्त भेष में मित्र के साथ देखा, तब मन में अत्यन्त आनन्दित होने लगी।

श्लोक: चित्रसेन तब देखत भयो, जो कुछ कुतुहल होतो भयो,
खिन्न खेदराजा को देख, कहत मित्र को सुनि धरि भेष।।८८।

अर्थ : राजा और राज कन्या को जब खेद होते चित्रसेन कुमार ने देखा तब अपने मित्र को यों कहने लगा।

श्लोक: अहो मित्र सरकारज धरू, तब सहाय आरोपन करूं।
कार्य अब हम सबहिं हुओ, अधुना करगोचर सव भयो।।८९।।

अर्थ : अहो मित्र, तुम्हारे सहारे अब मैं शीघ्र इस धनुष पर बाण आरोपन करता हूँ और अब मेरा सब कार्य सफल हो गया।

श्लोक: यह विचार कियो मन मांहि पहुंचों पास धनुष के जाय,
नमस्कार आदी जिन करी, फेर धनंजय सिमरन वरी।।९०।।

अर्थ : यह विचार चित्रसेन कुमार धनुष के पास पहुंचा। प्रथम आदि तीर्थंकर को नमस्कार करके फिर अर्जुन का स्मरण करने लगा।

श्लोक: खड्गपाणि ले कर्कमित्र, रक्षा हेत हुवो तब पृष्ट।
चित्रसेन उठावन लियो, लीलायुक्त जुरोपन कियो।।९१।।

अर्थ : तलवार हाथ में लेकर रक्षा के लिए मित्र उसके पीछे खड़ा रहा चित्रसेन ने शीघ्र ही धनुष को उठा लिया। लीला युक्त होकर बाण उस पर चढ़ा दिया।

श्लोक: पूर्ण पूर्ण शरहि तब देख, पद्मावती कुमरा को पेख,
वर माला कर में जवलीन, कंठविषैप्रक्षेप जु कीन।।६२।।

अर्थ : जब कुमार ने पूर्ण रूप से धनुष पर बाण चढ़ा लिया। ऐसा देखकर पद्मावती कुमार को देखने लगी और हाथ में वरमाला लेकर समीप में आई और कुमार के गले में वर माला पहना दी।

श्लोक: अज्ञात हि पुरूष को देख, कंठ विषै माला को पेख
क्रोध रूप सब राजा भये, सब आयुध ले सन्मुख ठये।।६३।।

अर्थ : इस अज्ञात पुरूष को वरा देख कर सब राजा क्रोधित हो गए और अपने-अपने आयुध लेकर युद्ध के लिए तैयार हो गए।

श्लोक: अज्ञात हि पुरूषन के कंठ, कन्या वर माला दे संठ
इहै दुरात्मा अव हीं हरो, कन्या कों औरहिं वर वरो।।६४।।

अर्थ : अज्ञात पुरूष के कण्ठ में वरमाला देखकर सब राजा कहने लगे, इस दुरात्मा को मारों और इस कन्या का किसी और के साथ ब्याह करो।

श्लोक: यह विचार सकल नृपतहा, मार–मार शब्द हि हुवो तहां,
यक्ष सहाय लियो चित धार, सन्मुख हुवो युद्ध की धार।।६५।।

अर्थ : यह विचार कर सारे राजा मारो-मारो शब्द करने लगे, तब कुमार ने उस जिन शासन यक्ष का स्मरण कर और युद्ध के लिये सन्मुख हो गया।

श्लोक: वहु संग्राम तिनहि संग कियो, सब नृपतहां भगावत ठयो।
जैसे एक सिंह गुंजार, भाग जात हस्तिन की मार।।६६।।

अर्थ : बहुत संग्राम हुआ, चित्रसेन कुमार ने सब राजाओं को मार-मार *कर वहां से भगा दिया, जैसे सिंह की आवाज सुनकर ही हाथी* भाग जाते हैं।

श्लोक: चित्रसेन को देखत सवैं दसो दिशा को भागत तवें।
तब राजा पद्मरथ जान, ऐसी कहत भयोधरिमान।।६७।।

अर्थ : चित्रसेन को देखते ही सब राजा दशों दिशाओं में भाग गये, तब राजा पद्मरथ स्वाभिमान से ऐसा कहने लगा।

श्लोक: सुनो भूप सब वानी इसी, जो कछु भट भाखत है जिसी।
सबहि भूप जब मोन जुगहे, विरदावलि तब सुनते भये।।६८।।

अर्थ : सुनो सब राजा लोग जो वाणी शूरवीरों के द्वारा कही गई है, तब सब राजा मौन से बैठ गये और विररदवलि कहने लगे।

छप्पय

श्लोक: वीरसेन नृप राज सकल राजन पति राजा,
वसंत पुरी तहां नग्र सकल सुख युक्त जुसाजा।।६६।।

अर्थ : वीरसेन राजा सब राजाओं का राजा है। वह वसंत पुरी का राजा है, और सुखों की खान है।

श्लोक: चित्रसेन तिस नाम सकल गुण आकर जानो,
चिरंजय तु भूतली, विषै चिरंजय मुख मानो।।१००।।

अर्थ : चित्रसेन उसका नाम है सकल गुणों की खान है और आयुष्मान है। दीर्घजीवी है।

श्लोक: कला बहत्तर युक्त है सकल गुणन की खान,
क्षत्री कुल उत्पत्यति हुवो, वैरी वृंद संहार।।१०१।।

अर्थ : वह संपूर्ण गुणों की खान, बहत्तर कला से युक्त है। क्षत्रिय कूलोत्पन्न है। बैरियों का संहार करने वाला है।

चौपाई

श्लोक: ऐसो अमृत वाक्य जु सुनो, पद्मरथ हि नृप वहु सुख मनो
ठैरो–ठैरो सबहीं भूप, भट्टजल पितहि सरूप।।१०२।।

अर्थ : इस प्रकार अमृतमयी वाक्य को सुनकर पद्मरथ राजा बहुत सुख मानने लगा और कहने लगा ठहरो-ठहरो राजाओं मैं कुछ कहूँगा, जैसा भाट ने कहा है, वहीं ठीक है।

श्लोक: सुन करके सब कुल उत्पत्ति, विस्मित भू भूज हुये सवत्
एत्सौर्यगांभीर जुपना, क्षत्रीय कुल नहि होवै बिना।।१।।

अर्थ : सबने जब कुमार के कुल की उत्पत्ति सुनी, तब सब विस्मित हो गये। सब लोग कहने लगे कि क्षत्रिय कुल के बिना इतना शौर्य और गांभीर्य नहीं हो सकता है।

श्लोक: इस कारन ते जानत भये, प्रीत परस्पर कर्ते भये।
क्षिमा–क्षिमा सवने तहां करी, प्रीत परस्पर तिन आदरी।।२।।

अर्थ : इस कारण सब को उसके बारे में जानकारी हो गई, तब परस्पर प्रीति करने लगे, सबने क्षमा धारण कराई और परस्पर प्रीति करने लगे।

श्लोक: तबहि पद्मरथ राजा जान, महां हर्ष पूरित गुन खान
कियो विवाह महासुख भयो, बहु विस्तार विवाह जु कियो।।३।।

अर्थ : तब पद्मरथ राजा महाहर्षित होकर उसके गुणों का बखान करते हुये बहुत विस्तार से विवाह करके सुख रूप हो गया उन्हें महासुख का अनुभव हुआ।

श्लोक: कर मोचन बहु दिने दान, हयवाजी आभूषण जान,
रथ आदिक वहु वस्त्र जु दिये, पुर ग्राम–निवहु सोवा दिये।।४।।

अर्थ : करमोचन क्रिया में बहुत से हाथी, घोड़े, आभूषण वस्त्र, रथ आदि व ग्राम नगरादिक भी दिये।

श्लोक: दोनों पाणी ग्रहण जु भयो, बहु आनंद परस्पर ठयो।
पूर व भव अनुबंध सुजान, जाती सुमरन उपजो ज्ञान।।५।।

अर्थ : दोनों का पाणिग्रहण हो गया। बहुत आनन्द हुआ। पूर्व भव के संबंध से दोनों को जाति स्मरण का ज्ञान हो गया।

श्लोक: जाचग जनहि दान बहुदयो, निज–निज स्थान भूप भेजियो।
बहुत काल तहां वीतत भयो, स्वसुर ग्रह वसन तिन कियो।।६।।

अर्थ : याचक जनों को भी बहुत दान दिया। फिर राजा ने सब राजाओं को अपने-अपने गांवों में विनम्रपूर्वक प्रस्थान कराया। चित्रसेन कुमार अपने ससुर के घर में बहुत काल तक रहे।।६।।

श्लोक: अर्द्ध राज नृप दीनों जवें, पुण्य हि फल पायो तिन तवे।
धर्म हिते नव निध जु होय, धर्महितें जु सु जसगहोय।।७।।

अर्थ : पद्मरथ राजा ने अपने जवाई को आधा राज्य भी दे दिया। आचार्य कहते हैं कि पुण्य के प्रभाव से ये सब फल उसने पाया। धर्म से नव निधि मिलती है। धर्म से ही सारे जग में यश फैल जाता है।

श्लोक: गयो अशुभ सब धर्म सहाय, वाठो शुभको कहै वठाय।
धर्म एक त्रिभुवन में सार, धर्म ही दुःख विनासन हार।।८।।

अर्थ : उसके अशुभ कर्म का उदय समाप्त हो गया। मात्र धर्म ही सहायक रहा गया। एक धर्म ही तीनों लोकों में सहायक होता है, धर्म ही दुःखों का नाश करने वाला है।

श्लोक: धर्महिते नर भव पाईये, धर्महि उत्तम कुल आईये।
धर्म हिते कीरत विस्तरै, धर्म हितें को जस विंव करै।।९।।

अर्थ : धर्म से ही नरभव प्राप्त होता है। धर्म से ही उत्तम कुल प्राप्त होता है। धर्म से ही कीर्ति विस्तारती है, धर्म से ही यश प्राप्त होता है।

श्लोक: धर्म हीतै वाडै पर वार, पुत्र कलित्र विभोजु अपार,
धर्म ग्रह आवै नहि कोय, धर्महितें चक्रेश्वर होय।।१०।।

अर्थ : धर्म से ही परिवार की वृद्धि, पुत्र कलत्र आदि भी मिलते हैं। धर्म के प्रभाव से ग्रहादिक शान्त हो जाते हैं और धर्म से ही चक्रेश्वर की विभूति प्राप्त होती है।

श्लोक: धर्म हिते नर वैर नवहै, धर्मी कोई बुरो नाहि कहै।
धर्म सवे ईश्वर हो रंक, धर्म हिते नहि चढ़ै कलंक।।११।।

अर्थ : धर्म से सब प्रकार का वैर शान्त हो जाता है। धर्मी को कोई बुरा नहीं कहता है। हाँ, अगर धर्म छोड़ दिया जाये तो राजा भी रंक हो जाता है। धर्म से किसी प्रकार का कलंक नहीं लगता है।

श्लोकः धर्म ताहि जु लेय वुढाय, जब जम त्रास दिखावै ताहि,
कहै केशपद छांडे तवे, धर्म जु राख ले लहें जवें।।१२।।

अर्थ : यदि यमराज जीव को कष्ट देने लगें व उसके केश पकड़ लेवें तो धर्म ही उसको बचा सकता है।

श्लोकः धर्म हितें सब मिटे कलेश, धर्म हितै मर होय सुरेश,
बहुत बात को कहै वढ़ाय, धर्महितें नर मुक्तें जाय।।१३।।

अर्थ : धर्म ही से सब क्लेश मिट जाता है धर्म से ही जीव अमर होता है बहुत बात कहां तक कहें, धर्म से मनुष्य मोक्ष को चला जाता है।

श्लोकः और कछु सब दुख को धाम, धर्म एक है सुख को नाम।
धर्म हिते श्रीपाल हि रूप, मकर ध्वज सम भयो अनुप।।१४।।

अर्थ : इसके अलावा जो भी सुख का धाम कहा है वह सब धर्म को ही कहा है। धर्म के ही प्रभाव से श्रीपाल कोटि भट्ट कामदेव के समान हुए थे, यह सब धर्म का ही प्रभाव है।

श्लोकः कुष्ट व्याधते लियो उवार, पाई महामनोहर नार,
धर्म समान अवर नहि कोय, मन वांछित धर्म हि फल होय।।१५।।

अर्थ : धर्म ने श्रीपाल को कुष्ठ व्याधि से उबार लिया। रूप सुन्दर मैना रानी पाई, इसलिये धर्म के समान दूसरी कोई वस्तु नहीं है जो जीवों को मन वांछित फल को देता है।

यदुक्तं :काया हंस बिना, नदी जल बिना दाता बिना याचका।
भ्राता स्नेह बिना यतिर्गुन बिना धेनुं च दुग्धं बिना,
भार्या भक्ति बिना पुरं, नृप बिना वृक्षं चपत्रं बिना,
दीपैर्तैल बिना निशा शशि बिना पुन्यं बिना मानवा।।१६।।

अर्थ : जैसे शरीर की शोभा आत्मा के बिना नहीं, नदी की शोभा पानी के बिना नहीं, दाता बिना याचक की शोभा नहीं, स्नेह के बिना भाई की शोभा नहीं, साधु की शोभा गुणों के बिना नहीं। पति भक्ति के बिना पत्नी की शोभा नहीं, नगर की शोभा राजा के बिना नहीं, वृक्ष की शोभा पत्तों के बिना नहीं, दीपक की शोभा

तेल से है, रात्रि की शोभा चन्द्रमा से है उसी प्रकार मनुष्य भव की शोभा पुण्य कर्म के उदय से है।

श्लोकः इतिश्री जिनसेनाचार्य विरच्यतायां चित्रसेन पद्मावती चरित्रे चित्रसेन रत्नपुर प्राप्त चित्रपट दिखावन। पद्मावती वियोग पद्मरथ स्वयं वरमंडप रचना चित्रसेन वज्रसार धनुष आसेपन सकल नृप युद्ध निर्द्धाटन पद्मावती .चित्रसेन सहित मित्र रत्नपुर स्थित नाम पूर्वाचार्यानुसारेन पर्नन मूलचंद कवि कृत नाम द्वितीय अधिकार की हिन्दी टीका समाप्त हुई।

तृतीय अध्याय

श्लोकः अर्हंतो भगवंते इन्द्र महिता सिद्धाश्च सिद्धि स्थिता।
आचार्य जिनशासनोन्नति करा पूज्या उपाध्याय का।।
श्री सिद्धान्त सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराध का।
पंचैते परमेष्ठिना प्रतिदिनं कुर्वंतु नो मंगलं।।१।।

चौपाई

श्लोकः ये तो कथन इहां ही रहो अवर कछुक इम वर्णन कहो।
भव्य जीव मन वच दे कान, सुनो कथा जु सरस प्रमाण।।२।।

अर्थ : यह तो कथा यहाँ ही रही। आगे इसका वर्णन और किया है जो भव्य जीवों, मन लगाकर कान से सुनो, यह कथा बहुत रस सहित है।

श्लोकः कितनेक दिन वीतेति हठाम, स्वसुर ग्रह कीनो विश्राम।
एक दिवस निद्रातुर भयो, पहर याम नीश जाग्रन ठयो।।३।।

अर्थ : कितने ही दिन श्वसुर के घर में चित्रसेन रहा। एक दिन पहली प्रहर में ही निद्राधीन हो गया और दूसरे प्रहर में ही निद्रा भंग हो गई।

श्लोकः चित्रसेन मन चिन्ता भई, राज विभूत याद तब भई,
पुर वसंत पत्तन जो नाम, याद कुमार के आयो ताम।।४।।

अर्थ : तब चित्रसेन के मन में कुछ चिन्ता हुई और उसे राज्य विभूति याद आ गई व पहले का नगर भी याद आ गया।

श्लोकः उठ प्रभात मुख म्लान जु भयो, रत्नसार के पासहि गयो,
हृदे गुह्य परकासन कियो, जैसो मन में संसै भयो।।५।।

अर्थ : प्रातःकाल उठकर मुखम्लान करता हुआ रत्नसार मित्र के पास गया, और अपने हृदय की गुप्त बात जो मन में थी, उसको बता दी।

श्लोकः रत्नसार सुन मेरी बात जो कछु मन में मेरे भ्रात।
स्वसुर ग्रह निवास नाहीं जोग, होवत है लज्जायुत भोग।।६।।

अर्थ : हे मित्र! रत्नसार जो मेरे मन में बात आई है उसे कहता हूँ, श्वसुर के घर में ज्यादा दिनों तक रहना अच्छा नहीं है। यह लज्जा की बात है।

यदुक्तं : स्वसुर ग्रह निवासो स्वर्ग तुल्य नराणां।
यदि भवति विवेकी पंचवाषट दिनानी।।
दधिघृत मधु लोभात्मासमेंकं स्थितश्चेत्।
सभवतिखर तुल्यो मान वो मान हीनाः।।७।।

अर्थ : श्वसुर के घर में निवास स्वर्ग के तुल्य भी मनुष्य को हो तो पाँच व छः दिन ही रहना चाहिये, वही मानव विवेकी है। दही, घृत और मीठे के लोभ से यदि ज्यादा निवास करता है तो उस मानव की गधे के समान मान-हानि होती है और वह गधे के समान ही माना जाता है।

यदुक्तं : उत्तमाः स्वगुणै ख्याताः मध्यमाश्चपितुर्गुणैः।
अधमातुलैख्याताः स्वसुरै ख्याता धमा धमा।।८।।

अर्थ : उत्तम वही पुरूष है जो स्वयं के गुणों में रहे। याने, स्वयं पर आधारित रहें और पिता की संपत्ति पर रहें, वह पुरूष मध्यम है, और नीच वह है जो मामा के ऊपर आधारित रहे, किन्तु श्वसुर के गुणों पर (घर में) रहने वाला अधम से भी अधम है।

चौपाई

श्लोक: यह सुनकर तवमित्र जु बात, भली–भली उचरी हरषात्।
रत्नसार राजा पै गयो, तबहि विनती करतो भयो।।९।।

अर्थ : मित्र ने यह बात सुनकर कहा आपने बहुत अच्छा कहा, बहुत अच्छा कहा, ऐसा कहता हुआ प्रसन्न हुआ। रत्नसार राजा के पास गया और विनती करने लगा।

श्लोक: महाराज सुन लीजै अवै तुमहि देश सुख पायो सवें।
अब हम आज्ञा दीजै सही, जाकर अपनी देखें मही।।१०।।

अर्थ : हे राजन्! हमारी बात सुनिये हमने आपके नगर में आपके राज्य में बहुत सुख भोगें हैं। अब हमें हमारे नगर में जाने की आज्ञा दीजिये, हम लोग जायें।

श्लोक: बहुत दिना हमको भये स्वामि माता–पिता वियोग करामि।
कर प्रशाद स्वामी हम ताहि, जाकर अपने कुटुंब मिलाहि।।११।।

अर्थ : हमको यहाँ बहुत दिन हो गये हैं। माता-पिता का वियोग हो गया है। हे राजन्! प्रसन्न होकर हमें हमारे कुटुम्ब से मिलने की आज्ञा दीजिये।

श्लोक: तवहि पद्मरथ राजा जान, मंत्रिन आगै कियो वखान।
सकल सामग्री त्यार जु करी, सेवा की विध जैसी खरी।।१२।।

अर्थ : यह सुनकर राजा पद्मरथ अपने मंत्रियों से कहने लगा। संपूर्ण सामग्री तैयार करो, जैसा व्यवहार में किया जाता है।

श्लोक: चलते राउ उठो विहसंत, एक हजार दिये गज दंत।
चार सहस वर दिये तुरंग, दिये छत्र–चामर दोय चंग।।१३।।

अर्थ : फिर राजा अपने आसन से उठा और अपने जमाई को एक हजार हाथी, चार हजार घोड़े, दो चामर और छत्र दिये।

श्लोकः दियो धन तिंह अगन अपार, कविजन कहत लहै नहि पार,
वस्त्रा भर्न दिये शुभ धने, जिनमें नगनिर्मालिक बने।।१४।।

अर्थ : राजा ने उन्हें अपार धन राशि भी दी। जिसके बारे में कविजन भी कहते पार नहीं पा रहे हैं और भी जिनमें निर्मोल हीरादि रत्न जड़े हैं ऐसे वस्त्र भी दिये।

श्लोकः आपन तिलक करो नर नाह सबनगरी मिट गयो उछाह।
पद्मावती के कर्नाभर्न, नग निर्मोलक जड़ै सुर्वन।।१५।।

अर्थ : सबके तिलक किया, सारी नगरी का उछाह ही मिट गया। पद्मावती के कानों के आभरण में रत्न लगे हुये थे।

श्लोकः कितने दिये इसे चौडोर जिन्ने लगै मुक्ताहल और,
हय गय रथ निर्मोलक घनै जिनकी शोभा कहत न बने।।१६।।

अर्थ : हाथी, घोड़ा, रथ आदि बहुत सी वस्तुएँ दी, जिनकी शोभा कही नहीं जा सकती है।

श्लोकः रानी को अति उमग्यो हियो, कंठा लवनदुहिता कियो।
बार–बार कहै विलखाय, विधकी कथा न वरनी जाय।।१७।।

अर्थ : रानी का हृदय अति दुःखित होने लगा। अपनी बेटी को गले लगाया, बार-बार दुःखित होकर कहने लगी कि कर्म की रेखा मेटी नहीं जा सकती है।

श्लोकः कित दस मास गर्भ में धरी, कीत मेरे कन्या औतरी।
कित में प्रीत निरंतर वई हा पुत्री पर्देशन भई।।१८।।

अर्थ : देखो यह दस महीना मेरे गर्भ में रही। फिर कन्या रूप में पैदा हुई। कितनी मेरी इस पर प्रीति थी और अब देखो मेरी पुत्री परदेश की हो गई।

श्लोकः बारंबार कहै यह छोह बहुरी कित देखुंगी तोहि।
मनकी मोहन प्रान प्रियार, दर्शन दुर्लभ भई कुमार।।१९।।

अर्थ : बार-बार रानी कहने लगी, हे पुत्री अब मैं तुझे कहाँ देखूंगी। तुम तो मन को मोहने वाली हो। मेरे प्राणों से भी प्यारी हो। अब तुम्हारा दर्शन भी दुर्लभ हो जायेगा।

श्लोकः यह कहि कंठ लगी अकुलाय, पुत्री तब रोवै अति नाई,
कंपीत अधर न आवै वात, पुत्री सिथल भई अति गात्र।।२०।।

अर्थ : इतना कह कर वह पुत्री के कंठ में लग गई पुत्री भी रोने लगी, तब रानी कहने लगी कि हे पुत्री, तुम रोओ मत, पुत्री भी अति दुखी होने लगी।।२०।।

श्लोकः वचन तोतले दई असीस, वावल जीवों को खरीस,
भ्रात न की जोड़ी बहु बढ़ौ, शुभ की कला दिनहि दिन चढ़ौ।।२१।।

अर्थ : तोतले वचन बोलते हुये आशीष दिया। अखण्ड सौभाग्यवती होओ। भ्राताओं की जोड़ी बहुत बढ़े। यानि काफी पुत्रों की माता बनो। शुभ का उदय ही उदय हो।

श्लोकः धर्म बल पसरो यह भनो, सदा सुहाग रहो तो तनो
निवसों सदा शीलसों नेह, कहै सुता जननी सुन एह।।२२।।

अर्थ : धर्म की लता सदा बढ़ती रहे। सदा सुहाग बना रहे। नित्य ही शील-संयम से रहो और भी बातें पुत्री को कहने लगी।

श्लोकः तब रानी बोली भर नैन, गले खखरै बोली वैन।
सुन पुत्री तु कुल आचार ते मत पुत्री विसरै सार।।२३।।

अर्थ : रानी आँखों में पानी भरकर कहने लगी, हे पुत्री तू कुलाचार को कभी भी मत छोड़ना।

श्लोकः पिय आयसमति भूलो चित, सासू सेव कीजियो नित्त,
निवसो सदा शील को भार, बढ़ो सासुरो अरू सौ सार।।२४।।

अर्थ : पति की आज्ञा का पालन करना, सासूजी की सेवा करना, सदा शील का पालन करते हुये ससुराल के नाम को बढ़ाओ।

श्लोकः करो राज मही कु पर संत, चिर जीवो चित्रसेन सु कंत,
सदा नेह निवसो पिव संग, धर्म बुद्धि रहियो वर चंग।।२५।।

अर्थ : राजा की पृथ्वी को शोभित करते हुये, चिरकाल तक तुम्हारे पति चित्रसेन जीवें।

श्लोकः अपने पति की प्यारी हो। धर्म बुद्धि सदा बनी रहें। २६।।
शील संयुक्त भोग वो भोग, मेरी इह आसीस तुम जोग।
लोचन हुइ वहें परवाह कंठा लवन मुक्का धाह।

अर्थ : शील संयुक्त होकर शील का पालन करना, मेरी यही आशीष है, ऐसा कहती हुई वह जोर-जोर से रोने लगी।

श्लोक: विछुरत अति दुख पायो धनो, ताकि कथा कहां लो गनो,
चित्रसेन चलियो ले जोग, करे रूदन नगरी के लोग।।२७।।

अर्थ : बिछुड़ते हुये बहुत मन में दुःख हुआ उसको कहाँ तक कहें। तब चित्रसेन कुमार अपने नगर की ओर बढ़ने लगा, सारी नगरी के लोग रोने लगे।

श्लोक: बारं–बारं राव विलखाय, कहै सुनो चित्रसेन हि राय,
यह मेरी विनती है तोहि, मन में मति भूलै तू मोहि।।२८।।

अर्थ : राजा बार-बार दुःखित होता हुआ चित्रसेन से कहने लगा कि हे राजन्। मेरी विनती है, मुझे तुम कभी मत भूलना।

श्लोक: विनतीय है कहूँ करी जोर कबहुँ दीजे दर्श वहोर,
पूर वे हो शुभ प्रगटो हो मोहि, तातें दर्शन भयो है तोहि।।२९।।

अर्थ : मैं हाथ जोड़कर विनती करता हूँ फिर आकर दर्शन देना। पूर्व-कर्म के उदय से ही तुम्हारे दर्शन हुये हैं।

श्लोक: अवसो बहुर भिन्न हो गये, दारून पाप सहाई भये।
कहा करो विध को निरमान, तो से सजन करैं पयान।।३०।।

अर्थ : अब तो हमसे आप दूर हो जायेंगे, यह महापाप का उदय है। विधि के अनुसार ही सज्जन छोड़कर दूर देश को चले जाते हैं।

श्लोक: तब बोलो चित्रसेन कुमार, भो नृप तुम सम कौन उदार।
तुम हमको सुख दियो अपार, तुमते प्रगट भयो संसार।।३१।।

अर्थ : तब चित्रसेन कुमार बोला, हे राजन, आपके समान उदार मन वाला कौन हो सकता है। आपने हमको बहुत सुख दिया, आप ही से तो यह संसार प्रकट हुआ है।

श्लोक: कछु दिवस सुख पायो घनो, अवलो–पियो भाग्य मो तनो।
घंटो पुन्न कछु कही न जाय, छुटे राई तुम्हारे पाय।।३२।।

अर्थ : हे राजन्। आपके प्रसाद से कुछ ही दिनों तक बहुत सुख पाया, अब हमारा भाग्य उल्टा आ गया है जो आपकी चरण-सेवा छूट रही है।

श्लोकः भर अंकट भेटो भूपाल, चित्रसेन चलियो अरि शाल।
ढरै चमर सिर दीनो छत्र, चित्रसेन भयी राव महत ।।३३।।

अर्थ : राजा चित्रसेन अपने श्वसुर के गले लगा, फिर वहाँ से चल दिया, सिर पर छत्र लगा हुआ है। चमर ढुल रहे हैं। चित्रसेन राजा के समान हो गया।

श्लोकः चाउरंग दल चलो प्रचंड, उडी धूल छायो सुरखंड।
भो–कहराउ भयो लवजान, अति गंभीर वजै निशान।।३४।।

अर्थ : चतुरंग सेना जब चली, तब इतनी धूल उड़ी कि शूरवीर लोग भी आच्छादित हो गये।

श्लोकः बाजों की गंभीर ध्वनि बज रही थी।।३४।।
जो सवसेंन प्रगट कर कहो, बढ़ै कथा कछु अंत न लहों।
नाना देश लखत सो चलो, एक उपवन तिन देखो भलो।।३५।।

अर्थ : अगर सारी सेना का वर्णन किया जाये तो कथा का विस्तार बढ़ जायेगा, नाना प्रकार के देशों को देखता हुआ वह जा रहा था। इतने में ही एक उपवन दिखाई दिया।

श्लोकः तिसवन में एक वट वृष जान, महा मनोहर पादक जान।
चतुरदिशा सो फैलन लियो, साषा पंत्रहि युक्त जु भयो।।३६।।

अर्थ : उस वन में एक वट वृक्ष है। वह वृक्ष बहुत ही मनोहर था। चारों दिशाओं में फैला हुआ था और शाखा पत्र से युक्त है।

श्लोकः तिस पादप तल ठैहरत भयो, सेना सवहि जु डेरा दियो
शीतल सघन छाय पेखियो, अतिमनोहर वृक्ष देखियो।।३७।।

अर्थ : इस वृक्ष के नीचे ठहर गया, सेना सबही को वहाँ ही ठहरा दिया, उस वृक्ष की शीतल छाया थी, अति मनोहर थी।

श्लोकः रात्रस में तब सोते भये, रात्रस मे यह कोतग भयो।
यक्ष यक्षनी वट संयुक्त, रहते थे तहाँ महापवित्र।।३८।।

अर्थ : रात्रि का समय हुआ। सब सोने लगे, सोते समय वहाँ एक कौतुक हुआ, उस वृक्ष पर यक्ष यक्षिनी रहते थे, वो महापवित्र थे।

श्लोकः साखा ऊपर जानो धाम, महामनोहर सुंदर ठाम।।३६।।

अर्थ : उन दोनों का वट वृक्ष के ऊपर ही सुन्दर निवास स्थान था।

श्लोकः तब ही संध्या काल जु हुवो, सेना युक्त जु कुमर सोइयो

अर्थ : दंपति एक स्थान के विषे, मार्ग परिश्रम युक्त जु भखै।

श्लोकः तब सायंकाल हो गया, सेनायुक्त चित्रसेन कुमार सो गये।
रत्नसार खेड्गं जु हाथ, स्वामी रक्षा हेत इए विख्यात।।४०।।

अर्थ : एक जगह दंपति मार्ग परिश्रम से युक्त होकर कहने लगे। रत्नसार हाथ में तलवार लेकर स्वामी की रक्षा कर रहा है।

श्लोकः रक्षा करता निशा जब गई, वानी तब अैसी तहां चई।
सो सब सुनो भविक चित लाय, जो कछु हुवो तहां पर भाय।।४१।।

अर्थ : रक्षा करते-करते जब आधी रात बीत गई, तब ऐसी वाणी सुनाई पड़ी। क्या सुनाई पड़ा, सो हे भविकजन चित्त लगाकर सुनो जो कुछ हुआ सो उसे कहता हूँ।

योगी राशि

श्लोकः रतनसार तहा पहरा देई और सुनो मन लाई।
गोमुख नामा यक्ष विराजै ता वट ऊपर भाई।।
चक्रेश्वरी तिस भामनि जानो क्रम कुल वसत सो आई।
अद जिनंद के रक्षक भाषै निशदिन जिन गुन गाई।।४२।।

अर्थ : रतनसार जब पहरा दे रहा था, सो क्या हुआ मन लगाकर सुनो, उस वटवृक्ष पर गोमुख नाम का यक्ष अपनी चक्रेश्वरी देवी के साथ स्थित था, आदि तीर्थकर का यक्ष, जिन गुण गाने में आसक्त था।

श्लोक : वृक्ष स्थित कहें यक्ष यक्षनी आप सवाद कराई।
पिता राज्य चाहे देवो न देवो, पुण्य हि सब कछु पाई।।
यह सुन चक्रेश्वरी बोली, ये क्या वचन सुनाई।
गोमुख यक्ष तवहि इम बोलो, कुछ नहि बात बताई।।४२।।

अर्थ : वृक्ष पर स्थित यक्ष यक्षिनी से कहने लगा, यह क्या बात आपने बताई, पिता ने चाहे राज्य नहीं दिया हो किन्तु पुण्य ही सब कुछ

है। यह सुनकर चक्रेश्वरी बोली कि आपने यह क्या बताई। गोमुख यक्ष तब कहने लगा कि देवी कुछ भी मत पूछो यह पुण्य की महिमा है।

श्लोकः महाहट्टन तव देवी कीनो, यक्ष तवे समझावें।
रात विषै नहि बोलन कहिये श्री जिन आगम गावै।।
ऐसो भेदन पुछै मोही, रात पिछै बतलावै।
गोमुख तवहि सवहि इम कहियो कछु नहि समझ में आवै।।४३।।

अर्थः जब देवी हठ करने लगी, तब यक्ष कहने लगा कि रात्रि में नहीं बोलना चाहिये ऐसा जिनागम बतलाता है, यह भेद मेरे से रात्रि में नहीं पूछो प्रातः होते ही बतलाऊगाँ, तो भी देवी को कुछ समझ में नहीं आ रहा है।

यदुक्तंःदिनानिरीक्ष वक्तव्यं, रात्रौ नैव च नैव च।
विचरंती महा धूर्ते वटे वर रूचिर्यथा।।४४।।

अर्थः रात्रि में कभी नहीं बोलना चाहिऐ, जो बोलता है वह धूर्त है, ऐसा नीतिकारों ने कहा है।

योगीराशि

श्लोकः ये दृष्टांत तवहि जु सुनायो, स्त्री हठ नाहि मानी।
तव तिन यक्ष जु कहत भयो है बोले ऐसी वानी।।
सनु–सुन देवि जो कछु हैगी, कहुं तेरे से वखानी।
अवध ज्ञान कर कहत भयो तहां जो कुछ ज्ञान में जानी।।४५।।

अर्थ : ऐसा कहने पर भी जब देवी नहीं मानी, तो यक्ष ऐसा कहने लगा कि दे देवी सुनों जो कुछ होगा सो मै कहता हूँ सुन, मेरे अवधि ज्ञानानुसार जो दिख रहा है उसको कहता हूँ।

श्लोकः साधर्मीक मम जानो निश्चै जो वट नीचे सोवै,
तिस उपगार हेत में कहतो सुन कछु वचन जु होवै।।
माता कुमर की काल वसी भई, पुत्र मोह के भोवै।
पिता जो इसको परावसी हुवो प्रीतन कवहुँ विछोवै।।४६।।

अर्थ : जो वट वृक्ष के नीचे सो रहा है, वह मेरा साधर्मी है। उसके उपकार के लिये जो कुछ होने वाला है उसको मै कहता हूँ। कुमार की माता तो पुत्र के मोह में काल के अधीन हो गई, और इसका पिता स्त्री-प्रेम में पर वश हो गया।

श्लोक :राजा महिषी कीनी तिसको विमला नाम सुजानों।
गुण हि सेन तसु पुत्र जु हूवो, गुणसागर पहिचानो।।
विमला पाप जु युक्त कहिये, राजा को ठग लीनो।
अपने पुत्र के राज के कारण दीनों चितवन कीनो।।४७।।

अर्थ : राजा ने जिसको पटरानी का पद दिया था, विमला रानी को उसके संयोग से एक गुणसागर नाम का पुत्र हुआ। विमला रानी के मन में पाप उत्पन्न हुआ और राजा के साथ ठगाई करने लगी। राजा और रानी ऐसा विचार करने लगे।

श्लोकः पिता मोह के कारण आवै चित्रसेन जु कुमारों।
वक्र जु अश्व चढाकर तिसको इस विध तिसको मारो।।
ये कर पुण्य के योग से वचना और उपाई विचारो।
यंत्र भई परतोली करके तामें तिसको निवारो।।४८।।

अर्थ : पिता के मोह के कारण चित्रसेन कुमार आ जाता है तो उस कुमार को या तो दुष्ट घोड़े के ऊपर चढाकर मारो, फिर भी बच जाय तो यंत्र में ड़ाल कर मार डालो।

श्लोकः जे कर तहां भी जान वचै तो पुण्य के योग कुमारा।
तो तिसको विष मोदक दीजै, तीजो उपाय विचारा।।
राजहेत गुणसेन कुमर की नृप विमला मन धारा।
ऐसी कुबुद्ध हुई है तिनको उपजस जग विस्तारा।।४६।।

अर्थ : अगर ऐसा करने से भी बच जाय तो विष का लड्डू खिलाकर मारो। गुणसेन के राज्य के कारण राजा रानी ऐसा विचार करने लगे, ऐसी खोटी बुद्धि उत्पन्न कर अपयश प्राप्त किया।

श्लोक :चारो आवली इसकी टलेगी मित्र सहायतेरानी।
सर्व भूमि को राज करेगो जेसो इन्द्र वरवानी।।

कृत उपगार जु मंत्री सुत तहां किसि के आगे वखानी।
पत्थर रूप होवै जो ये ही निश्चै मन में जानी।।५०।।

अर्थ : चारों प्रकार के कष्ट इसके टल जायेंगे मित्र की सहायता से हे रानी तुम जानो,उसके बाद इन्द्र की ऐसी बानी है कि यह सर्व भूमि पर राज करेगा। यह निश्चित है तुम जान लो यदि इस उपकार को मंत्री ने यदि किसी के सामने खोल दिया तो व पत्थर का हो जायेगा।

श्लोकः यह वार्ता मंत्री सुत सुनै कै, निश्चै दिल विच ठानी।
गुह मंत्र तिन मन में राखो नहीं किसूने जानी।।
प्रातः समे उठ तहां ते चलियो सेना युक्त जु ज्ञानी।
नृप सुत मंत्री सु तहां जानो तन छाया प्रीतमानी।।५१।।

अर्थः इस बात को मंत्री पुत्र रत्न-सार ने सुन ली। किन्तु अपने हृदय में छुपाकर रखी, किसी को पता भी नही लगने दिया, प्रातः होते ही सेनायुक्त होकर वहाँ से चल दिया, मंत्री पुत्र चित्रसेन का परम स्नेही था।

श्लोकः अविलंब हि प्रयान जु कीनो, कितनेक दिन के मांही।
स्वपुर सन्निध तहां जब आए, वन उद्यान ठहरांई।।
वीरसेन नृप तवहिं सुनियो, आगम पुत्र को भाई ।
नगरी सहत जु आवन कीनो सन्मुख पुत्र मिलाई।।५२।।

अर्थ : शीघ्र ही प्रयाण करते हुए कितने ही दिनों में स्वयं के नगर के नजदीक उद्यान में ठहर गये। जब वीरसेन राजा ने सुना कि पुत्र नजदीक आया है। नगरी की प्रजा सहित पुत्र से मिलने के लिये सन्मुख आया।

श्लोकः पुर हि वसंत उद्यान के मांही दोनों सेन मिलाई।
चित्रसेन तव उतरों हयते पिता चरन सिर नाई।।
पिता मिलाप विषै तहां सबके, लोवन ग्र भर आई ।
बहुत दिनन विच मिलो कुमर तहाँ पिता चरण ना
छुडाई।।५३।।

अर्थः जब दोनों तरफ से मिलान हुवा तब चित्रसेन शीघ्र ही घोड़े से उतर गया, पिता के चरणों में सिर झुकाया जब पिता के साथ कुमार का मिलन हुआ, तब सबके आँखों से आँसू झरने लगे, बहुत दिन के बाद पिता का मिलान होने पर चरण ही नहीं छोड़ रहा था।

श्लोकः वीरसेंन नृप ऊपर मोहते कुशल क्षेम जु पुछाई।
पुत्र के चढने वास्ते तवहीं दुष्ट तुरंग बुलाई।।
मंत्री पुत्र चतुरता कर्के हय को तब ही छिपाई।
अन्य तुरंग जु लाय कर दीनो, नहि जानो किन भाई।।५४।।

अर्थः पुत्र ने अपने पिता के ऊपर मोह करते हुये, कुशल क्षेम पूछी, पिता ने पुत्र के चढ़ने के लिये एक दुष्ट घोड़ा राजा ने बुलाया तब मंत्री पुत्र ने चतुरता से छिपा कर दूसरा घोड़ा लाकर दिया, और किसी को मालूम भी नहीं पड़ने दिया।

श्लोकः बजें वायजित्र तहाँ पर बहुते वर्द्धायन वहु कीनो।
जय–जय शब्द करें भाटक जन तिनहि वहु दीनों।।
गीत वाजित्र नाटक बहुकीने सबहि खुशीरंग भिनो।
तबहि प्रतोली पास जु आयो जंत्रा कार नवीनो।।४६।।

अर्थः बाजे बज रहे है। जय-जय शब्द कर रहे थे, बहुत दान बँट रहा था, गीत वाजित्र नाटक हो रहे थे, सब ही खुशी मना रहे थे, उसी समय यंत्राकार प्रतोली नजदीक आ गई।

श्लोकः मंत्री पुत्र तब आगे जाके दंड प्रहार जु कीनो।
हय पीच्छै को चोकों जब ही, शब्द प्रतोली गिरीनो।।
कितनें जन तिस भीतर दब गयो, हा हा कार मचीनो।
तबहि राजा चित आनंदो, मन मे हरख नवीनो।।५६।।

अर्थः उसी समय मंत्री पुत्र रत्नसार आगे जाके प्रतोली यंत्र पर जोर से दंड का प्रहार किया। घोडा पिछे खिसक गया। प्रतोली गिर पडी। अनेक लोग दब गये। हाहाकार मच गया राजा के मन में आनन्द हुआ।

श्लोकः मन में वहु आश्चर्य जुमानों, पुत्र जु पुन्य अपारा।
यह सोचहि अपने घर लायो, जै जै शब्द निहारा।।
विनय युक्त जब पुत्र को देखो कोप जुं मनतें निवारा।
तवहि कुमार महल में जाके विमल चरन चित धारा।।५७।।

अर्थः राजा ने मन में बहुत आश्चर्य माना, पुत्र पुण्यवान है, यह सोचकर अपने घर लाया जै जै शब्द करने लगे, विनययुक्त पुत्र को देखकर राजा का क्रोध चला गया, कुमार ने महल में जाकर माता विमला के चरणों में पडा।

श्लोकः उपमातृ के चरण कमल कूं बहु विध नमन सू कीनो।
पुत्र कुशल पूछी तिन जबही माता चरण चित दीनों।।
विविध प्रकारें नमन जु कीनी, निज घर को मन कीनो।
आयो अपने महलन माहीं सुख पायो जु नवीनों।।५८।।
सौतेली माता को विनय युक्त होकर नमस्कार किया। तब माता को, पुत्र ने कुशलता पूछी। माता के चरणों में चित लगाया,अपना ही घर मानने लगा, फिर अपने महल में आया, और सुख पाने लगा।।५८।।

अडिल छन्द

श्लोकः तब ही विमला मन में इम चितवन करी खोटी बुद्धि धार जु ऐसी उच्चरी।
विष मोदक वन वाय धराउँ अवसही भोजनाविष तेमाहं निश्चै इम कही।।५९।।

अर्थः तब विमला रानी ऐसा विचार करने लगी, विषसंयक्त लड्डु (मोदक) बनवा कर इस पुत्र को खिलाकर मारूँगी।

श्लोकः ऐसे मन में थाप पाप चितवन करी सुंदर कर जु धरै मन सुख धरी निमंत्रन तब रानी कुमार को भेजियो मानत भयो कुमार तबहि सुख से लिया।।६०।।

अर्थ : ऐसा मन में पाप धार कर चिन्तण करने लगी और सुन्दर विषयुक्त लड्डू बनवाये या तवन चित्रसेन कुमार को निमंत्रण भेजा, कुमार ने भी माता का निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

श्लोकः रत्नसार तब सुनो निमंत्रण कुमर को, चित चिंता युक्त भयो रत्नसार को,
गुड मंत्र तिन मन में तवहि विचारियों तिस सहशतिन मोदक बहु बनवाइयों।।६१।।

अर्थ : जब रत्नसार ने सुना कि माता ने कुमार को निमंत्रण दिया है जब रत्नसार के मन में चिंता उत्पन्न हुई, तब मन में यक्ष की बात याद कर उसी ही के समान उसने भी लड्डू बनवा दिये।

श्लोकः विमला ने सब सामग्री को निखारी षटरसयुंक्त रसोई कर धरी।
सहत कुटंब निमंत्रण कुमर कोदीजियो, नाना भेद रसोई कीजियो।।६२।।

अर्थः विमलारानी ने पूर्वयोजनानुसार षट्रसमयी महान खानेयोग्य सब पदार्थ तैयार करवा दिये सारे कुटुम्ब सहित निमंत्रण कुमार को देकर तैयार हो गई।

श्लोकः भोजन अवसर कुमर बलावन भेजियो सहत परिछद आयो महल में वैठियों
सहत परिछद आयो महल में वैठिया, भोजन अवसर भूपति आयो तहां सही,
भूपति सहत जु पंक्ति तहा वैठन लही।।६३।।

अर्थः भोजन के समय कुमार को बुलवाया। राजा भी वहां आ गया, राजकुमार भी परिवार सहित आ गया, और एक पंक्ति में भोजन के लिए बैठ यये।

श्लोकः रानी आने हाथ सवन देती भई, नाना व्यजन रूप तहां पर निर्मई।
वीरसेन के अग्र जु सुन्दर मोदका, दीनों विमला बहुत बनें सो सोधका।।६४।।

अर्थः रानी अपने हाथ से नाना प्रकार के व्यन्जन परोसती है, वीरसेन के आगे उसने सुन्दर मोदक भी परोस दिया।

श्लोकः चित्रसेन रत्नसार एक भाजन मही, बैठे सुहद निरंत मन निश्चै सही, दो मोदक भी परोस दिया ,तिव रानी तव देती भई,
भोली बनकर दिन तिन आगे गैरत भई।।६४।।

अर्थ : चित्रसेन और रत्नसार एक ही थाली में भोजन के लिए खाने को बैठे थे, उसी समय रानी ने आकर दो लड्डू उनकी थाली में भोली बनकर लाकर डाल दिया।

मंत्री सुत तव मोदक देख विचारियो, हा हा स्त्री चरित्र कछु नहिं जानियो।

पुत्रराज के कारन जहर जु देत है, पंचेंदी को घात नर्क फल लेत है।।६६।।

अर्थः मंत्री पुत्र इन लड्डुओं को देखकर आश्चर्य करने लगा, विचारने लगा कि देखो स्त्रियों का चरित्र कोई नहीं जान सकता। पुत्र राज्य के कारण दूसरे पुत्र को जहर देरकर पंचेन्द्रिय का घातकर नर्क में जाने का कार्य कर रही है।

यदुक्तंः कर्मेगति को पिन जीव प्रेक्ष, वर्ष नं चापिय वर्ष नं च।

स्त्री चरित्रं पुरूषस्य भाग्यं, देवो न जानाति कुतो मनुष्य।।६७।।

अर्थः जीव के कर्मो का फल कोई नही जान सकता।उसी प्रकार स्त्री चरित्र और पुरूष के भाग्य को देव भी नहीं जान सकता तो फिर मनुष्य कैसे जानेगा।

चौपाई

श्लोकः मंत्री सुत इम चितवन फरी, हस्त लाघवता अैसी धरी।

थाल युक्त मोदक ठाईयों, और मोदक तहां पठाइयो।।६८।।

अर्थ : मंत्री पुत्र ने चिन्तवन कर चालाकी से उस थाल को उठाकर लक्षण वहां पर दूसरा थाल लाकर रख दिया।

श्लोकः चित्रसेन जानो वृतांत तबही, मोन कियो सुखचांत।

भोजन कियो भूपकर युक्त आनंद सहित जु सर्वहि उक्त।।६९।।

अर्थ : चित्रसेन ने जान लिया कि थाल पलट दिया है तो भी मौन रहा, और आनन्द से राजा के साथ भोजन कर लिया।

श्लोकः दियो ताम्बुल जु चर्चन कियो, वस्त्राभर्ण बहुत तिन दियो।

उपमाता सन्मान जु कियो, पुन मंदिर अपने भेज़िया।।७०।।

अर्थ : ताम्बुल, वस्त्राभरण बहुत देकर उपमाता ने सम्मान किया और उसके महल में कुमार को भेज दिया।

श्लोकः पदमावती तव वहुविध नई, दान मान संतोषित भई
वहु सम्मान तासको कियो, विनय युक्त तिन घर भेजियो।।७१।।

अर्थ : पद्मावती तो नई थी, दान सम्मान से संतोषित हो गई, बहुत सम्मान कर विनय से घर भेज दिया।

यदुक्तंःदेवानुकूलतः पुंसा तथा पुन्य प्रभावतः
सुधार्यते विषंसर्पो पुण्यमालायतेक्षणात् ।।७२।।

अर्थ : जीवों के पुण्य प्रभाव से देव भी अनुकूल हो जाते है, सर्प को धारण करने पर पुष्पों की माला बन जाती है।

चौपाई

श्लोकः वीरसेन नृप धर्म संयुक्त, मुनिवर दान देय निज शक्त।
पत्नी ताहि सिखायो इसो, पुत्र मोह नहि चित में वसो।।७३।।

अर्थ : राजा वीरसेन धर्म से संयुक्त हुआ तो, मुनियों को दान देने लगा, अपनी रानी के मोह में नहीं आकर पुत्र मोह नहीं करता था।

श्लोकः एक दिनाकी कहियन जाय, रजनी चिन्ता उपजी राय,
हा कुलवंत पुत्र मो तनो, मारन मैंने चिंतनो।।७४।।

अर्थ एक दिन रात्रि में उसको यह चिन्ता उत्पन्न हुई कि हाय मै कैसा पापी हूँ, मेरे कुलवान पुत्र को मैने मारने की चिन्ता की ।

श्लोकः धृग मो जननी, धृग मो तात् धृग–धृग पुत्र जु चिंतवोधात्
श्री जिन मारग ऐसो कहो, घात पंचेन्द्री नर्क जु लहो।।७५।।

अर्थ : मेरे माता-पिता को धिक्कार है, मेरे को भी धिक्कार है जो मैंने पुत्र को घात की चिन्ता की । जिनेन्द्र प्रभु के मार्ग में पंचेन्द्री घात का पाप नर्क लिखा है।

श्लोकः वहु वैराग्य भाव चित दियो, अनित्य भावना भावत भयो।
ताहि समें आदहि जिनराई समोशर्ण आयोतिहठाय।।७६।।

अर्थ : उस राजा ने वैराग्य भावना में बहुत ध्यान दिया और गया अनित्य भावना को भाने लगा, उसी समय आदिनाथ तीर्थकर का समवशरण आ गया।

श्लोकः वन माली तवहीं आ ककै वृद्धापन
श्री युगादि आगम तिन कहो, पट घोषण नगर हि जब दियो।।७७।।
अर्थ : वन माली आया और राजा को समाचार कहा, तब राजा ने नगर में ड्योडी पिटवाई।
श्लोकः वीरसेन चालियो पुरसाथ, पहुंचत सबनि नमायो माथ।
समवरण रचियो चतुर्देव, व प्रतीन राजत सुखमेव ।।७८।।
अर्थ : वीरसेन राजा नगरवासियों के साथ समवशरण में जाकर प्रभु को शीश नवाया। राजा ने देखा समवशरण को देवों ने रचा है, जो सुख का कारण है।
श्लोकः चारों तरफ जुगोपुर कहै, बावडी बीच कमल फर रहे।
अशोक वृक्ष ता मध्य जुजान, चतुर्मुखी बैठै,भगवान्।।७९।।
अर्थ : चारों तरफ गोपुर हैं, बावडी में बीच में कमल खिले हुये हैं। अशोक वृक्ष के मध्य चतुर्मुखी भगवान बैठे हुए हैं।
श्लोकः भवपयोध निस्तारन जान चित हरन वानी व्याख्यान।
अमृत रूप जान तिन कियो, द्वादशांग वाणी चित दिया।।८०।।
अर्थ : भवरूपी कीचड़ को दूर करने में समर्थ, चित को हरण करने वाली वाणी, द्वादशांग रूप वाणी खिरने लगी।
यदुक्तंः अनित्यानि शरीराणि विभवो नैव साश्वतः
नित्य सन्निह तो मृत्युः कर्तव्यो धर्म संग्रह।।८१।।
अर्थ : शरीर तो अनित्य है वैभव शाश्वत् नहीं है, मृत्यु अति निकट है, इसलिये धर्म संग्रह करना चाहिए।
श्लोकः धर्मेण हन्यते व्याधी, धर्मेण हन्यते ग्रहाः
धर्मेण हन्यते शत्रुः यत्र धर्मस्ततों जयः।।८२।।
अर्थ : धर्म से ही व्याधी नष्ट होती है, धर्म से ग्रहों का उपद्रव नाश होता है। धर्म से शत्रुओं का उपद्रव नाश होता है। इसलिये जहाँ धर्म है, वहां ही जय होती है।

चौपाई

श्लोकः यह विध वानी सुनकर भूप, मन वैराग्य कियोजु अनूप।
त्याग न कियो राज को सवें दई जलांजलि मुखते तवें।।८३।।

अर्थ : इस प्रकार भगवान की वाणी सुनकर राजा मन में वैरागी हुआ और राज्य को तिलान्जली देकर राज्य से उदासीन हो गया।

श्लोकः वीरसेन राजा गृह गयो, चित्रसेन बुलवावत भयो।
लेहु पुत्र राज की नीति , यही हमारे कुल की रीती।।८४।।

अर्थ : वीरसेन राजा अपने घर पर आया और चित्रसेन पुत्र को बुलाकर कहने लगा कि हे पुत्र, यह राज्य तुम करो, कुल की रीति भी यही है कि बड़े पुत्र को राज्य दे दिया जाय।

श्लोकः सत्तराज पालो धर धीर, हम निज काज समारे वीर।
यह सुन विलखे भयो कुमार, एह वचन तुम कहो अपार।।८५।।

अर्थ : हे पुत्र सत्यवान् होकर राज्य का पालन करो, हम अपने धर्म काम में लगते हैं, ऐसा पिता के मुख से सुनकर पुत्र चित्रसेन मन में दुःखी होने लगा।

श्लोकः बालापन सुखसकोन जान्, हय सुख गय सुख लयो न मान्।
होय निचिंतन किनो भोग, राजभार हूं नाही जोग।।८६।।

अर्थ : बालकपन में तो सुख नहीं पाया, अब कुछ थोडी राहत मिली तो राज्य भोग नहीं करूं मै राज्य करने योग्य ही नही हूँ।

श्लोकः तुम बिन राजन मुझर्पे होय, महां कष्ट को देखै जोई
तबहि राव कहवै सुनी धीर, कुल मारग प्रगटो वर वीर।।८७।।

अर्थ : हे पिता तुम्हारे बिना मेरे से राज्य नहीं हो सकता, बहुत कष्ट की बात है तब राजा कहने लगा कि हे पुत्र मेरी बात सुनो, मेरे अन्दर की कुल क्रम से आई हुई रीत प्रगट हुई है।

जो सुत पिता सुख नहीं देय, अरू कुटुम्ब को भार न लेय।।८८।।

अर्थ : वो पुत्र क्या जो पिता के राज्य को नहीं संभाले और ऐसे पुत्र को जन्म देने से भी क्या लाभ, जो पुत्र पिता को सुख नहीं देवे और कुटुम्ब का भार भी नहीं संभाले।

श्लोकः अरू जै कुल कलंक नही हरै, ते सुत भव पार न अव तरै,
तुं तो सब लायक गुणसार तुत हि लेहु राज को भार।।८६।।

अर्थ : जो पुत्र कुल का कलंक नहीं हरता है, वह कभी सुखी नहीं रह पाता, और तुम तो सब गुणों की खान हो और मेरा राज्य शीघ्र ही लेओ।

श्लोकः यह सुन कुमर विरू धोचित, राज भार तव लियो पवित।
राय हर्ष सुत को मुख चाहि, राज पाट सिर बांधो ताहि।।६०।।

अर्थ : पिता के मुख से ऐसा सुनकर राज्य भार को संभाल लिया, मंजूर कर लिया, राजा ने हर्षपूर्वक राज्याभिषेक कर दिया और राज्य मुकुट सिर पर बांध दिया।

श्लोकः मेरे वचन सुनो सर भूप, में थापो सुन राज अनूप।
मेरे सदृश मानो इसे किंचित दोष न व्यापै किसै।।६१।।

अर्थ : हे राजाओं सब लोग मेरे वचन सुनों मैने अपने स्थान पर अपने पुत्र को राजा बनाया है, इसको मेरे समान ही आदर देना इसमें कोई दोष नही मानना।

श्लोकः त्यागो मोह जु छोडो राज, गयो प्रिया समझावन काज।
पालन करो गृहस्थि धर्म, हम जिनवर को लीनो शर्न।।६२।।

अर्थ : राज्य का त्याग कर मोह भी छोड दिया, फिर राजा अपनी रानी को संबोधन करने गया, और कहने लगा कि हे प्रिया तुम गृहस्थ धर्म का पालन करो, मैंने तो अब जिनेन्द्र प्रभु का शरण ले लिया है।

श्लोकः पति वचन अैसो सुन लियो, तवहि प्रिया उतर यो दियो।
सुनो स्वामि मद्वचन प्रमाण क्षणजु मात्र न रहिये प्राण।।६३।।

अर्थ : जब पति के मुख से ऐसा वचन सुना तब रानी उत्तर देने लगी, हे स्वामिन् मेरे वचन सुनो, आपके बिना एक क्षण भी मेरे प्राण नहीं रहेगें।

यदुक्तंः तावद्राज्य सुखं देवः तावत् श्रृंगार भूषनं
स्त्रीणां भोगो भवेतावत् यावत् प्राणेश सन्निधो।।६४।।

अर्थ : स्त्री के लिये तो राज्य-सुख व श्रृंगार भूषण तब तक ही शोभा देते है जब तक उसके प्राणपति रहते है।

श्लोकः बोलो तबहीं वीरसेन रानी सुनौं, लयमान निजपुत्र सकल आरती हनो।
हम निज कारज करें येही मन मे धरी जाग समान संसार सकल जिय में धरि।।६५।।

अर्थ : तब राजा कहने लगा कि तुम अपने पुत्र के लिये कुछ भी लेकर संपूर्ण आर्तध्यान से रहित हो जाओ। हम तो आत्म कल्याण के मार्ग को पकडेंगे। यही हमने दृढ़ता से निश्चय कर लिया है।

श्लोकः राजन किसके पुत्ररू किसकी संपदा स्त्री भर्ता बिना शोभा नहीं दे कदा ।
जो तुमरोहि सरूप सोई धारन करू, तुमरे संग जु पंच महाव्रत आदरूगी।।६६।।

अर्थ : हे राजन किसकी संपदा और किसके पुत्र है। स्त्री का पति ही सब कुछ है। पति के बिना स्त्री की शोभा नहीं है। मैं तो जो रूप तुम धारण करोगे, उसको ही मै धारण करूँगी, अर्थात् मैं भी महाव्रत धारण करूंगी ।

श्लोकः राजा रानी वैराग्य मे वरंजित भये, आदि तीर्थकर समवशरण जाते भये।
नमस्कार कर जिनको वहु स्तुति करी, विनययुक्त चारित्र महाव्रत आदरी।।६७।।

अर्थ : राजा और रानी वैराग्य युक्त होकर आदि तीर्थंकर के समवशरण में जाकर नमस्कार किया और फिर महाव्रत को धारण कर लिया।

श्लोकः वीरसेन मुनि मही पीठ विचरत भये,तपकर केवल ज्ञान के सो आकर भये।
भव्य जीव प्रतिबोध बहुत सकाईयो, अंतकाल में शीघ्र ही शिव सुख पाइयो।।६८।।

अर्थ : वीरसेन मुनि पृथ्वी पर तपश्चरण करने लगे, तप कर केवलज्ञान प्राप्त किया, भव्य जीवों को संबोधन करके अन्त में मोक्ष को गये।

श्लोकः चित्रसेन तब धराधीश हो तो भयो, पुत्र प्रजा वत्पालन तिन पीछे कियो।
रत्नसार मंत्री सुत बैठाइयों, शतक पांच सौ मंत्री कुनि पर जानिये।।६९।।

अर्थ : चित्रसेन फिर पृथ्वी का राजा हुआ और अपनी प्रजा का पुत्र के समान पालन करने लगा। मित्र रत्नसार को ५०० मंत्रियों के ऊपर मंत्री का पद दिया।

श्लोक: मंत्री युक्त जु पालन करतो राज को देश–देश में कीरती निशदिन वाढ को।
निकंटक सो इस विध राज करै सही, पुन्य प्रभावन सुनो सकल अरू जे कही।।१००।।

अर्थः मंत्रियों सहित होकर राज्य का पालन करने लगा। देश-देश में यश फैलने लगा, निष्कंटक राज करने लगा, यह सब पुण्य का प्रभाव है।

श्लोक: रत्नसार तब मन में चिन्ता इम करै, तीन आवली सुह्रद पुन्य यो गेहरै
रत्नसार तब चित्रसेन तें इम कहो, सुनो मित्र चित लाय जो जिनवानी कहो।।१०१।।

अर्थ : रत्नसार तब मन में ऐसी चिन्ता करने लगा कि तीन आवली प्रमाण पुण्य तो यही है। तब रत्नसार चित्रसेन से ऐसा कहने लगा, कि हे मित्र चित्त लगाकर सुनो जो जिनवाणी में कहा है।

दोहा

श्लोक: वर प्रधान पुन्य हि करो, भव पर भव सुख देत,
इस समान नहीं जगत में जानो चतुर सु चेत् ।।१०२।।

अर्थ : श्रेष्ठ पुण्य ही इस भव में और अन्य भवों में सुख देने वाला है, इसके समान संसार में ओर कोई नही है ।

श्लोक: राज्य सुख इस पुरूष को महा दुःख कारी जान,
मनोभिष्ट जो पुन्य लहै कीजै पुन्य महान्।।१०३।।

अर्थ : राज्य सुख पुरूष को महा दुःखकारी है, मनोभिष्ट जो पुण्य *कमाता है, उसी का पुण्य महान है।*

श्लोक: तिस् कारन तुम पुण्य कीजिये श्री जिन भाषित दान
सकल दुरित जु पलाय कै पावै मोक्ष सुथान।।१०४।।

अर्थ : इस कारण आप पुण्य करिये, उसका रास्ता जिन भाषित दान है, उस दान के पुण्य से संपूर्ण कष्ट का निवारण हो जाता है और मोक्ष की भी प्राप्ति हो जाती है।

श्लोक: यह उपदेश जु पुन्य को कीनो रत्न सु सार
राजा हृदै विचार कै लीनो मस्तक धार ।१०५।

अर्थ : इस प्रकार रत्नसार का उपदेश सुनकर राजा ने हृदय मे धारण किया।

श्लोक: मंदीर जिर्णोद्धार कर दीने बहु बनवाई।
दीन पुरूष बहुदान दे नाना सुख लहाई।।१०६।।

अर्थ : पूर्व मंदिरो का जीर्णोद्धार करवाया, नये मंदिर बहुत बनवाये, दीनपुरूषों को दान दिया, उससे नाना प्रकार के सुख की प्राप्ति की ।

श्लोक: दान शाला, बहुती करी, जीव रहत तिस थान।
लंगडै लूलै तहां रहै बहुत कहा व्याख्यान।।१०७।।

अर्थ : दानशाला खुलवाई, लूले लंगडों को सद्उपदेश दिया, दानशाला में लोग आकर रहने लगे।

श्लोक: जिन अर्चन, पूजन विधी, करत दंपती सार।
इस रीति रहते भये, मुनिजन देत आहार।।१०८।।
चित्रसेन और पदमावती तीसरा महागुण अपार

अर्थः जिनेन्द्र प्रभु की भक्ति से राजा-रानी ने पूजा की, मुनियों को आहार दान दिया ।

श्लोक: चित्रसेन पद्मावती तीनो रत्नजुसार।
प्रीत सहत रहते भये महागुणज्ञ अपार।।१०९।।

अर्थः चित्रसेन पद्मावती रत्नसार ये तीनों बहुत प्रीति से रहने लगे, तीनो ही महागुणवान थे।

श्लोक: एक महल मे रहत है एक ही भाजन भुक्त।
सेन करे एक ही जगह तीनों जीव जु युक्त।।११०।।

अर्थ : तीनों एक ही महल में रहते थे, एक ही साथ खाना खाते थे, यहाँ तक कि सोते भी तीनो एक ही जगह थे।

श्लोकः निज स्वामि की भक्ति में रत्नसार को जान,
निश को पहरा देत है पाणीखङ्ग–महान।।१११।।

अर्थ : अपने स्वामी की भक्ति में रत्नसार हाथ में तलवार लेकर रात्रि भर पहरा देता था।

श्लोकः इस विध सुख कर युक्त तहां सुख तिष्टत तिह थान,
पूरव पुन्य प्रभावतें कालगमन नही जान।।११२।।

अर्थ : इस प्रकार सुख से युक्त हो सुख से रहने लगे, पूर्व पुण्य के प्रभाव से, समय निकलते देर नहीं लगी।

यदुक्तंः धर्म सर्व सुखाकरों हित करो धर्मनुधाश्चिन्वते।
धर्मे जैव समाप्यतै शिव सुखं धर्माय तस्मै नमः।।
धर्मानास्य परासृहद, भवभृता धर्मोहि द्रव्यं शतां।
धर्मे चित महांदधे प्रति दिन है धर्मोया पालयः।।११३।।

इति श्री जिनसेनाचार्य विरचित चित्र सेन पद्मावती चरित्र का श्री मूलचन्द कृत दोहा की हिन्दी भाषा समाप्त
(तृतीय पर्व समाप्त)

चतुर्थ अध्याय

चौपाई

श्लोकः इह विध राज करे नर नाथा, रत्नसार पद्मावति साथा
गमत काल नहिं जानत सोई, वहु दिन बीतत तिन को होई ।।१।।

अर्थ : इस प्रकार नर नाथ राजा चित्रसेन राज्य कर रहा था, रत्नसार मित्र व रानी पद्मावती के साथ में, सुख से बहुत काल बीत गया।

श्लोकः एक दिना की कहियन जाई, ताहि चरित्र सुनों तुम भाई।
रात विषै तिन सेन जुकीनो, दंपति रत्नसार तहां तीनो।।२।।

अर्थ : एक दिन की बात है कि रात्रि में चित्रसेन पद्मावती सो रहे थे। रत्नसार हाथ में तलवार लेकर पहरा दे रहे थे, उसी समय एक घटना घटित हुई, सो कहता हूँ ।

श्लोकः निद्रा निर्भर सोवें तेई, रत्नसार तहां पहरा देई।
अर्द्ध रात्रि महां कृष्ण जुनागा, शैया उपर देखो आगा।।३।।

अर्थ : अर्द्ध रात्रि में रत्नसार पहरा दे रहा था उसी समय चित्रसेन की शैय्या के ऊपर एक विषधर काला नाग दिखाई दिया।

श्लोकः यक्ष वचन जु सुमीरन कीनो, रत्नसार खङ्ग ही तव लीनो;
तावत पतन करो अहि तानें, भूमी दारून रक्त जुठानें।।४।।

अर्थ : रत्नसार ने उस समय यक्ष वचन का सुमिरन करके हाथ में तलवार उठायी और सर्प के दो टुकड़े कर दिये, सारी पृथ्वी रक्त से लाल लाल हो गई।

श्लोकः रानी जंघा उपर ताई, श्रोणित विदुं तवहि गिर जाई।
वस्त्रांचल जु ग्रहण तव कीनो, पूंछ दियो विदुं तत खीनो।।५।।

अर्थ : रक्त की एक बिन्दु रानी की जंघा पर पड़ गई, तब वस्त्रांचल हटाकर उसने रक्त को पोंछ दिया।

श्लोकः अंचल लगन मात्र नृप काया जागत क्रोध महत कियो राया।
बहु आश्चर्य कियो मन मांही, दारूण नैंन रक्त रहै छाई।।६।।

अर्थ : उसी समय हाथ लग जाने से चित्रसेन राजा की निद्रा भंग हो गई, रत्नसार पर क्रोध युक्त होता हुआ आश्चर्य से देखने लगा ।

श्लोक: रत्नसार नृप चेष्टा देखी, व्याकुलभूप हुवो चित पेखी।
इत तटनीउत व्याघ्र जुआयो कहा करूं किह विध समझाई।।७।।

अर्थ : जब रत्नसार ने राजा को क्रोधित एवं व्याकुल देखा तब वह सोचने लगा की क्या करूँ, कैसे राजा को समझाऊँ, उसे समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था।

श्लोक: काके सोच्यं धूत कारे च सत्यं, सर्पे शांति स्त्रीषु कोमोपशांति।
क्लीवे धैर्य मद्यपेतत्व चिंता, राजा मित्र केन दृष्ट श्रुतंवा।।८।।

अर्थ : कौवे में शुद्धि, जुआरी में सत्यता, सर्प में शांति, स्त्रियों में काम की शांति, नपुसंक में धैर्यता, शराबी में तत्व चिंता, और राजा की किसी के साथ मित्रता, ये सब बातें न तो देखी गई है न सुनी गई है।

अनुष्टप छंद

श्लोक: उपकारैर्नगृह्येत न सेवाभिर्न पौरूषैः।
भूपास्तु दुर्जना एवं नात्मीया हि कथंचनः।।६।।

अर्थ : राजा किसी का उपकार नही ग्रहण करता है। कितनी ही कोई सेवा करे या पुरूषार्थ करे। राजा किसी का भी मित्र नही होता है।

चौपाई

श्लोक: यथा तथ्य जो वचन कहां ही हषन मई ह्वांसी हो जाई।
जो अलीक बोलूं इस ठांई, राजा नहि मुझ कोप तियाई।।१०।।

अर्थ : अगर इस समय मैं सत्य भी कहूँ तो भी राजा नही मानेगा, क्योंकि उसने जो आंखों से देखा है उसी को मानेगा। अगर असत्य भी बोलो तो भी क्या होगा ।

श्लोक: ऐंसे चिंतवना तब कीनी, कहत भयो मन में दुख भीनी।
हे स्वामिने मम विनती धारो, सत्य वचन अहम कहत विचारो।।११।।

अर्थ : तब रत्नसार मन में दुखी होता हुआ कहने लगा कि हे स्वामिन मेरी बात पर विश्वास करो।

यदुक्तं : सत्यं मित्रे प्रिया स्त्रीभिः अलीकं मधुरं द्विषा।
अनुकूलं च सत्यं च वक्तव्यं स्वामिना सहं।।१२।।

अर्थ : सत्य बात अपने मित्र को और स्त्री को अवश्य कहना चाहिये, झुठ कभी नहीं बोलना चाहिये।

चौपाई

श्लोकः स्वामी सुन मम वचन प्रमाना सत्य वचन जो कहुं प्रधाना।
वचन मात्र पारवान हो जाई जानो निश्चै चतुरंग राई ।।१३।।

अर्थ : हे स्वामिन मेरे वचन प्रमाण मान कर सुनो मैं सत्य कहता हूँ। मैं झुठ आपके सामने कभी नही बोलूंगा।

श्लोकः तब ही भूप इम बोलो वानी, येह झूठ तुम कहत सुज्ञानी।
वचन कहत पाखा नही होवे, सत्यवचन मम कह दो जो है।।१४।।

अर्थ : तब राजा कहने लगा कि तुम किंचित भी झुठ मत कहो, जो सत्य है वह कह दो ।

श्लोकः येह वचन सुन कर्के भाई, बहुत सोच मन उपजो ताई।
पुनः साहस मन में तिन धारो, यक्ष वचन प्रारंभ समारो।।१५।।

अर्थ : राजा के वचन सुनकर के, रत्नसार के मन में बहुत चिंता उत्पन्न हुई, पुनः साहस करके यक्ष के वचन को याद करने लगा।

श्लोकः सुन भूप मम वचन जु धारो, सकल क्रोध मनते जु निवारो।
किंचित दूषन नहि इन मानो, शील युक्त पद्मावती जानो।।१६।।

अर्थ : राजा को कहने लगा कि हे राजन, आप संपूर्ण क्रोध का त्याग करो, और किंचित भी दोष नही मानों। महारानी पद्मावती शील युक्त है।

श्लोकः व्याह कियो कन्या ले आयो, अधोभाग वट वृक्ष ठराये।
तुम सब जानत होगे राई, कहा कहूं में तुम समुझाई ।।१७।।

अर्थ : जब आपका ब्याह होकर वहां से रवाना हुए और वहाँ रास्ते में एक वटवृक्ष के नीचे ठहर गये थे, सो तो आप सब जानते ही हैं ।

श्लोकः चक्रेश्वरी गोमुख यक्ष जानो, तिस वट उपर तिनको थानो।
तिन इम भाषन रात्रि में कीनो, सो सब मैनें तहां सुन लीनो।।१८।।

अर्थ : उस वृक्ष पर चक्रेश्वरी देवी और गोमुख यक्ष का निवास था, सो मैने रात्रि में उनकी होने वाली सारी वार्ता सुन ली।

श्लोकः प्रथम आवली अश्व सु जानो, सो टाली तुमरी अहमानो।
तुमने भी नहि तिस को जानी, अश्वगामनी विद्याठानी।।१६।।

अर्थ : प्रथम संकट जो अश्व का था सौ मैंने टाला इस बात को तुम ने भी नहीं जाना।

श्लोकः कथन कियो ये ही वचन प्रमाणा अग्र भूपती के जु बखाना।
रत्नसार जानत कहूवो हसन रूप सहसा तिन छुवो।।२०।।

अर्थ : यह कथन मैंने कहा, जो आपके सामने है। हे राजन और भी मैं आगे कहता हूं सूनो ।

श्लोकः पास प्रतोली के जब आये, अश्व जु मुखहि हतो ममराये।
शब्द प्रहार प्रतोली गिराई दूजा आवली येह सुनाई ।।२१।।

अर्थ : उस यक्ष ने दूसरा कष्ट यह कहा कि नगर प्रवेश में प्रतोली तुम्हारे ऊपर गिराई जायेगी सो मैने तुमको हटा कर दंड प्रहार से प्रतोली को गिरा दिया और तुमको बचा दिया।

श्लोकः रत्नसार जब यह कह दीनो, कटी प्रयंत हषन मई कीनो।
भूप पुनहि फिर पुछन कीनी, आगे कहा आवली चीनी ।।२२।।

अर्थ : रत्नसार ने जब यह बातें बताई, तब राजा कहने लगा कि आगे कौन-सी आवली है सो बताओं।

श्लोकः रानी विमला ने तब कीने विष मोद करंगत अति भीनै।
उलट पलट कीनो में ताई, तुम जानत होंगे सब राई।।२३।।

अर्थ : रानी विमला ने विष के मोदग आपकी थाली में डाले तो मैंने उस थाली को उलट-पलट कर दिया सो हे राजन् यह सब भी आप जानते हैं।

श्लोकः वचन कहत येह निष्पाता के आगे कंठ प्रयंत हषन मई जागै।
पुनः नृप आगे पुछ न लीनो रत्नसार कहियो जु नवीनो।।२४।।

अर्थ : राजा के आगे जो घटना घटी उसको सब बता दी और वह आगे कहने लगा।

श्लोक: सुनो मित्र मम वचन निष्पाता, सुनत होय तुमको बहुसाता।
सुख शैया निश दंपति सोये, आनंद रूप सखा मन मोहै।।२५।।

अर्थ : सुनो मित्र मेरे वचन निष्पाप है सुनते ही तुमको सुख मिलेगा, जब आप दोनों सुख शैय्या पर सोये हुवे थे।

श्लोक: श्रृंखल उतरत कृष्ण जुनागा, उरत शैया लटकन लागा।
मम तिस खडग घात तव कीनो श्रोणित बिंदू तबहि वहि जु गिरीनो।।२६।।

अर्थ : तब श्रृंखला (सांकल) से उतरता हुआ आपकी शैय्या पर एक काला सर्प देखा, मैने उसको तलवार से मार डाला, उसी की रक्त की बूंद वहाँ गिर गई थी।

श्लोक: पतित रानी जंघा की ताई, मन मे बहुत जुत व भय खाई।
श्रोणित बिंदु जहर चढ़जाई, इम विचार पूंछ कियो राई।।२७।।

अर्थ : रक्त की बूंद आपकी रानी के जंघा पर गिर पड़ी। तब मेरे मन मे बहुत भय उत्पन्न हुआ। सर्प के रक्त से कहीं जहर नही चढ जाये। इसी भय से मैंने पौंछ दिया था।

श्लोक: सब वृतांत कहो नृप आगैं, यक्ष उक्त आवलि अनुरागै।
दूर टली आवली नृप तेरीफे मम ऊपर आवली फेरी ।।२८।।

अर्थ : हे राजन्, सब गुप्त बाते मैंने आपके सामने कह दी। आपके दुःखों का निवारण हो गया। अब मेरे पर कष्ट आ गया है क्योंकि यक्ष ने ये भी कहा था कि जो यह रहस्य प्रगट करेगा वह पाषाण का पुतला हो जायेगा।

श्लोक: इम कह सहस धार जब लीनी, हुई पाखान मूर्त रंग भीनी
पृथ्वी पीठ पडो तव जाई, देव वचन अन्यथा नहि भाई ।।२९।।

अर्थ : इतना कहते ही तत्क्षण रत्नसार पाषाण की मूर्ति बन गया। पृथ्वी पर गिर पडा। देव वचन कभी अन्यथा नहीं होते ।

दोहा

श्लोकः रत्नसार की आपदा, राजा दुःख करंत।
वार वार गुण सिमर तो मूर्छा धरा निपडंत ।।३०।।

अर्थ : रत्नसार की आपदा को देखकर राजा बहुत दुखी हो गया और रत्नसार के गुणों का स्मरण करके मूर्छा खाकर पृथ्वी पर गिर जाता है।

श्लोकः शीतोपचार राजा कियो, चेतन भयो शरीर।
हा हा मित्र कहां गयो, मम प्राणेश सुधीर।।३१।।

अर्थ : राजा का शीतोपचार हो गया फिर तब सचेत होता फिर हाहाकार कर रोने लगता।

श्लोकः कमलन को रवि एक है रवि को कमल अनेक।
हमसे तुमको बहुत है तुमसे हमको एक।।३२।।

अर्थ : जैसे कमलों के लिये सूर्य एक है, लेकिन सूर्य को कमल अनेक है। हमारे सरीखे तुमको अनेक है, लेकिन हमारे लिये तुम एक हो।

श्लोकः देश विदेश गमन करै, मित्र जु करने काज।
मित्ररत्न में पाय कै, हार दियो सो आज।।३३।।

अर्थ : चित्रसेन दुःखी होकर के मन में सोचने लगा कि मेरे उपकारी मित्र के लिये मैं विदेश में जाऊँगा, क्योंकि उत्तम रत्नरूप मित्र को पाकर के भी मैनें उसको गंवा दिया है।

दोहा

श्लोकः ऐसा सोच विचार कर, सभा को लिया बुलाय।
मंत्री सब आन जुडो, भूपति मन विलखाय।।३४।।

अर्थ : इस प्रकार विचार करके राज्य सभा को बुलवाया, मंत्री आदि सब राज्य सभा में एकत्रित हुये राजा मन में बहुत दुखी था।

श्लोकः राजा का दुख देखकर मंत्री रहे समझाय।
होनहार टल नहीं सके, क्यों राजन दुःख पाय।।३५।।

अर्थ : राजा को खेद खिन्न देखकर सब मंत्री लोग राजा को समझा रहे हैं कि हे राजन होनी को कोई नहीं टाल सकता। इसलिये दुःख करना व्यर्थ है।

श्लोक: तब राजा कहने लगा, मंत्री सुनो सुजान।
तांत्रिक, मांत्रिक वैद्य से शीघ्र कराओ इलाज ।।३६।।

अर्थ : राजा कहने लगा कि हे ज्ञानी मंत्रियों, तांत्रिकों के द्वारा अथवा मांत्रिकों के द्वारा और वैद्यों के द्वारा मेरे सखा का उपचार कराओं। मैं तो अपने मित्र के बिना नहीं रह सकता हूं।

श्लोक: मंत्रियों ने शीघ्र ही उपचारक लिये बुलाय।
अपनी अपनी सब करे, चला न कछु उपाय।।३७।।

अर्थ : मंत्रियों ने सभी प्रकार के उपचारक बुलवा लिये, सब लोग अपना अपना उपचार रूप प्रयोग करने लगे, तो भी रत्नसार ठीक नहीं हुआ।

श्लोक: तब राजा दुख कियो अपार, मन में सोंच किया है भाई।
किस विध मित्र पूर्ववत होय, कौन विधि मित्र को सुख होय।।३८।।

अर्थ : जब यह देखा कि मित्र रत्नसार को कोई लाभ नही हुआ तब राजा मन में अत्यन्त दुखी होने लगा, किंकर्तव्य मूढ़ हो गया, किस विधि से मेरे मित्र को सुख मिले यह विचार करने लगा।

श्लोक: जब कुछ उपाय न उसको मिला, हार गये जितने थे वहां।
मित्र को ठीक करण के काज, करूं विदेश भ्रमण में आज।।३९।।

अर्थ : जब कुछ भी उपाय नहीं हुआ, सारे लोगों का उपाय व्यर्थ चला गया, तब राजा कहने लगा कि मैं तो अपने मित्र को ठीक करने के लिये विदेश भ्रमण को जाऊँगा।

श्लोक: राजा मंत्रियों से कहे, राज का अब मै त्याग करूं।
तुम कोई तो राज्य संभालो, मैं तो अब जाऊँगा भाई ।।४०।।

अर्थ : राजा मंत्रियों से कहने लगा, मैं तो इस राज्य का मित्र के बिना अब त्याग करूंगा, तुममें से कोई एक राज्य संभालो, मै तो यहां से जाऊँगा।

श्लोक: ये राजपाट लेवो, राजा के नैन रहै जल छाई, जो हम मित्र

समागम होवेगो आन मिलेंगे जु तुम कोहि भाई। जो नही मित्र संयोग मिलो तो वियोग फकीरी में जन्म गमाई।।४१।।

अर्थ : यह राजपाट तुम ले लो, ऐसा कहते हुऐ राजा के आंखों से आंसू निकलने लगे और दुखित वाणी से कहने लगा कि अगर मित्र का संयोग हुआ तो हे भाईयों हम फिर आकर मिल जायेंगे नहीं तो मित्र के वियोग में साधु बनकर जन्म गवायेंगे।

श्लोकः ये कहकर तब तिलक कियो, वहां मंत्री को राजयै दियो इव ठाई।
आप दिशांतर गमन तिन वन उपवन जु उलंघे जाई ।।४२।।

अर्थ : ऐसा कहते हुआ मंत्रियों को राज्य देकर राजा देशांतर को निकल पडा, बड़े बड़े वन उपवन उलांघता जा रहा है।

श्लोकः राज्य भार को मोह करो नहिं, बंधू रूदन करत छिटकाई।
स्त्री को मोह जु त्याग दियो अरू मित्र वियोग में हुवो है सुदाई।।४३।।

अर्थ : राज्य का मोह त्याग दिया, बंधु बांधवों को रोते छोड़ दिया, स्त्री का मोह भी त्याग दिया और मित्र के वियोग मे वनों वनों में भटकते रहें।

श्लोकः निर्भय होकर गमन कियो अरू खड़ग जु हस्त मे रहो तिस ठाई।
गहल पनो चित्रसेन हुवो वन हा मित्र हा मित्र शब्द कराई।।
कहि सीक, नाचै गावै वन में कहियक बैठ जु रूदन कराई।
ये गत चित्रसेन हुई तव तन मन की सुध बुध विसराई।।४४।।

अर्थ : निर्भय होकर हाय में तलवार को पकड़कर पागल की तरह करता हुआ हाय मित्र हाय मित्र कहकर पुकार रहा था। कहीं पर नाचने गाने लगता कही पर बैठकर रोने लगता आचार्य कहते है कि वह पागल की तरह करने लगा।

श्लोकः बहुत दिना इसे बीत गये, कर्म जोग वनति समय आई।
जाहं पर यक्ष यक्षिणी थानक वट ही वृक्ष उपर कहु भाई।।
तिस द्रुम नीचे सेन कियो मन आकुल व्याकुल निद्रा छाई।
वार वार उलट पलटत तहां दुख आरत निद्रा नहि आई।।४५।।

अर्थ : जब इस प्रकार उस वन में पागल की तरह घूमते बहुत दिन

निकल गये, तब कर्मयोग से वह उस स्थान पर पहुंचा, जहाँ पर वट वृक्ष था। उसके ऊपर यक्ष यक्षिणी थे। वट वृक्ष के नीचे आकर आकुल व्याकुल होता हुआ सो गया, किंतु व्याकुलता के कारण वह करवटें बदल रहा था उसको निद्रा नहीं आ रही थी।

अनुष्टप छंद

श्लोकः वियोगार्त्ते कुतो निद्रा तलों वलिं तरोस्तले।
सहष्टो यक्ष युग्मेन नीर निर्गत मत्सवत्।।४६।।

अर्थ : वियोग से आकुल हुये जीव को निद्रा कैसे आ सकती है जैसे पानी से बाहर निकली हुई मछली व्याकुल रहती है।

जोगी दासा

श्लोकः इस विध नृप आकुलता करतो वार वार पछतावै।
किन अवसर हम मित्रयुक्त यहां आकर सेन करावें।
अब ये अवसर कैसो आयो कैलो तरू विलावै।
विधना कष्ट विधना कष्ट बुरो तें दीनो, कछु नाहिं पार बसावै।।।४७।।

अर्थ : इस प्रकार राजा आकुलता करता हुआ बार बार पश्चाताप करता है कि कैसे हम दोनो मित्रों ने एक साथ यहाँ शयन किया था अब यह क्या अवसर आया है कि अकेला ही मैं यहां विलख रहा हूं। हे कर्म (विधि) तूने कैसा दुःख मुझे दिया है जो कहते भी पार नहीं पड़ रहा है। कर्म के आगे किसी का कुछ नहीं चलता है।

चौपाई

श्लोकः धाई जुमू की दुख अपार करता एक पासन कहूं उचार।
पूख पाप कहां मे कियो, जौ ऐसो विधना दुख दियो।।४८।।

अर्थ : वह बार-बार पश्चाताप कर रहा है उस वृक्ष के नीचे बैठकर हाय मेरा कैसा पाप कर्म का उदय आया। मैने कौनसा ऐसा पाप किया जो कर्म ने मुझे ऐसा दुःख दिया।

श्लोकः कै मैं निंदो जिनवर धर्म, कै में अशुभ कमायो कर्म।
कै में जीव दया परि हरो, कै गिरकर अगनी में जरो।।४८।।

अर्थ : क्या मैने जिनेन्द्र के धर्म की निंदा की है या कोई अशुभ कर्म को बांधा है अथवा जीव दया का पालन नही किया या अग्नि में जलकर आत्मघात किया है।

श्लोक: कै में मिथ्या गुरू सेइयो, कै कुपात्र कूंदान हि दियो,
कै कहुं उधारो अंग, कै में कियो व्रत को भंग।।५०।।

अर्थ : क्या मैंने मिथ्या गुरूओं की सेवा की या कुपात्र को दान दिया है क्या अंग का प्रदर्शन किया या कोई व्रत को भंग किया है।

श्लोक: कै गुरू कहो न लीनो मान, कै मै झूठो बोलो जान,
कै में परगुण मेटो जाई, कै कहूं गिरो नदी में जाई।।५१।।

अर्थ : क्या गुरू की आज्ञा भंग की है या झूठ बोला हूं अथवा दूसरों के गुणों को मिटाने की कोशिश की है या नदी में डूबकर आत्मघात किया है ।

श्लोक: कै काहू दुःख दीयो वीर कै अनछानो पीयो नीर।
कै मै कंदमूल फल खान, भरो उदर पोखै ये प्राण।।५२।।

अर्थ : क्या किसी को दुःख दिया है या अनछना पानी पीकर पाप बांधा है या कंदमूल खाकर उदरपूर्ति की है।

श्लोक: कै में शील रतन छांडियो, कै में कुल अपनो मांडियो।
कोन पाप में कियो जोग, यांते परो मित्र को सोग।।५३।।

अर्थ : या तो मैंने शीलरत्न को खंडित किया है या अपने कुल की परंपरा को खंडित किया है, हे भगवान कौनसा पाप मैने किया जो मुझे मित्र का वियोग हुआ है।

श्लोक: रत्नसार हा साहस धीर जीव दया पालन गंभीर।
हो मकर ध्वज रूप सुजान हा कुल कमल प्रफुल्लन भान।।५४।।

अर्थ : हे रत्नसार, तुम कितने साहसी थे धीर थे। जीव दया का पालन करने में गंभीर थे तुम्हारा रूप मकर ध्वज के समान था। कुल रूपी कमल को विकसाने वाले थे।

श्लोक: मित्र जु अवहीं क्रिया करै हु, क्यों हु नेक दिखाई देहु।
तरफत है दोऊ मो नेंन, तड़फत श्रवन सुनावो वैन।।५५।।

अर्थ : हे मित्र, अब तो हमारे पर कृपा करो, थोडे दिखाई तो देओ।

तुम्हारे बिना मेरे नयन तड़फ रहे है और तुम्हारे शब्द सुनने के लिये दोनो कान भी तड़फ रहे है।

श्लोक: हा हा मित्रहि देख विचार, शोक समुद्र से लेउ उबार।
प्रीतम ए हठू जियेन तोहि, छांड दिये तट ऊपर मोह।।५६।।

अर्थ : हे मित्र देखो, विचार करो मैं तो शोक समुद्र में डूब रहा हूं इसलिये मुझे इस समुद्र में डूबने से बचाओ, तुम तो मुंह फेर कर बैठ गये और मुझे तट पर छोड़ गये।

श्लोक: मित्र तुरंत हि मो उत्तर देहु, कै अब मेरी हत्या लेहु।
यह पुनः पुनः जपैसो वात, आसू परै मोतिन की पांति।।५७।।

अर्थ : हे मित्र मुझे तुरंत उत्तर दे दो अथवा मेरी हत्या हो जाने दो उसको यह बात दुबारा कहते हुए आंखो से आंसू बहे जा रहे थे।

श्लोक: कंपै अधर बहुत विलखाय चकित है हैव चिंतै अकुलाई।
विलख मूर्छा कुमरा को भई यक्षणी तवहीं कहती भई।।५८।।

अर्थ : जिसके अधर कंपित हो रहे है आकुलता से विलख कर बार बार मूर्छित हो जाता है, यह सब देखकर यक्षणी ऐसा कहने लगी।

जोगी रासा

श्लोक: यक्षनी तव इम कहन जुलागी, सुनो पिया हम वानी।
स्वामी पुरूष ये कौन जु हैगो, दुख आरत जु बखानी।।
कृपा आपनी करके स्वामी, भेद सकल जु सुनावो।
यह सुन गोमुख यक्ष जुबोलो, तुम नही जानन पावो।।५९।।

अर्थ : हे स्वामी सुनो यह पुरूष कौन है बहुत ही दुखी हो रहा है। हे स्वामी आप कृपा करके जो भेद है उसे सुनाओ। तब गोमुख यक्ष कहने लगा कि हे देवी तुम ये बातें नही जान पाओगी।

श्लोक: सहत सुन्ह सुह्रद जु कलित्रहि आयो, सेन्य युक्त इंहा रहियो।
किह कारन वियोग जु धारो, फिर इम पुछन लईयो।।
तबहि यक्षनारी प्रति बोलो, आवली कही जो मैंनें।
पूर्व हि चारो आवली भाषी सुनलई सो सवतेंने।।६०।।

अर्थ : अपने मित्र के साथ में सेना से युक्त होकर यहां पर आकर ठहरा था, तब किस कारण से मित्र से वियोग हो गया। तब यक्ष ऐसा

कहने लगा जो पहले मैने आवली कही, सो चारों आवली तुमको मैने उस दिन कही थी।

श्लोकः चारो ही आवली टल गई जिसकी मित्र योग ते टारी।
रत्नसार ने इसके आगे, सब ही विथा उचारी।।
तब ही आवली कहन मात्रतै हषण भइ हुवो सारो।
तद्वियोग आतुर हुयो ये ही फिर तो भूमि मजारो।।६१।।

अर्थ : चारों ही आवली (दुख की घडी) इसकी टल गई मित्र के योग से। रत्नसार ने वह गुप्त बात इसके सामने कह दी मात्र इसी के कारण रत्नसार पाषाण समान हो गया है अब उसके वियोग में आतुर होकर यह धरती पर इधर-उधर फिरता डोल रहा है।

श्लोकः स्नेह दुख ये बहुत बुरो है गहलो भयो जु कुमारो।
खान पान की सुध कछु नाही मन ही वियोग जुधारो।।
तबही यक्षणी मस्तक नायो,फिर पुछत भई ऐसे।
स्वामिन इस उपचार जु नाहि वा हैगो कहो कैसे।।६२।।

अर्थ : हे प्रिय स्नेह का दुख बहुत बडा है, उसी के कारण राजकुमार पागल हो गया है। इसको खाने-पीने की भी सुध नही है, मन में वियोग को धारण किए हुए है। यह सुनकर यक्षणी मस्तक नवाकर पूछने लगी कि हे स्वामिन् क्या इसका उपचार नही है और है तो कैसे है किस उपचार से यह ठीक हो सकता है।

श्लोकः यक्ष विचार ह्रदय में तबही अवधि ज्ञान तै भाषै।
इसके रोग को प्रतिकार तु सुमनमे अभिलाषै।।
कोइक स्त्री शीलयुत्त हो सुत जु सहित पहिचानो।
सो स्पर्शन इस हषन ही करही, निर्मल अंग हो जाने।।६३।।

अर्थ : यक्ष ने तब ही अवधि ज्ञान लगाया और कहने लगा कि इसके रोग का प्रतिकार सुनना चाहती हो तो सुनो कोई शीलवान स्त्री जो पुत्र सहित रत्नसार का स्पर्श करेगी और स्पर्शन मात्र से ही रत्नसार निर्मल अंग धारी पूर्ववत् हो जायेगा।

श्लोकः यह सब कारन सुनो नृपने बहुमन में सुख पायो।
मूल चूल वृतांत सुनो निश, निर्भय निद्राजुआयो।।

यक्ष वचन सुन मन में धारो, चित अमृत धरलीनो।
प्रात भई उठत तहां ते चलियो घर को पयानो किनो।।६४।।

अर्थ : यह सब बातें राजा ने सुन लीं। सुनकर मन में बहुत सुखी हुआ, आद्योपांत सारा कथन उसने सुन लिया था यह सब बाते मन में धारण कर प्रातः होते ही वह अपने नगर की ओर चल दिया।

श्लोक: अविलंबे प्रगुणी मन धारो, चित हुल्लास जु पायो।
चलत चलत जब बहु दिन बितै, पुरी वसंत में आयो।।
सुन आगम नृप को सब नगरी, सन्मुख लेन जु आये।
हर्ष सहित पद्मावती मिलियो प्रेम घटा मन छाये ।।६५।।

अर्थ : अविलम्बता से हर्षपूर्वक वह अपने नगर की ओर चल रहा है बहुत दिनों से वसंतपुर में पहुंचा राजा का आगमन सुनकर नगरी के लोग सन्मुख लेने को गये। हर्ष सहित होकर वह पद्मावती से भी मिला। उस पर प्रेम उमड़ रहा है।

श्लोक: तिसही समें पद्मावती रानी युक्त प्रसुत जु हाई
ताहि देख नृपमन वहु तूठो सुफल जनम हम होई।।
वांछित अर्थ जु मुझको पायो, पुन्य प्रभाव जु सोई।
इम विचार कर राज को पालै, मन चिंता नहि कोई।।६६।।

अर्थ : उस ही समय में रानी पद्मावती ने पुत्र रत्न उत्पन्न किया। राजा ने पुत्र का मुख देखकर और मन में बहुत संतुष्ट हुआ और अपने जन्म को सुफल जन्म मानने लगा । मेरे पुण्य प्रभाव से यह वांछित फल पाया है ऐसा विचार करता हुआ राज्य का परीपालन चिंता रहित होकर करने लगा।

श्लोक: चित्रसेन नृप बहु सुख मानो, धर्म ध्यान चित दीनो।
श्री जिनवर की पूजा करतो, मुनिजन आहार नवीनों।।
दया धर्म नित सेवन करतो, काल व्यतीत न जानो।
पुत्र तुल्य परजा को पालै, कोऊ दुख नहि मानें।।६७।।

अर्थ : चित्रसेन राजा मन में बहुत सुख मानता हुआ उसने धर्म ध्यान में मन लगाया, नित्य ही जिनवर की पूजा करने लगा। मुनिराज को आहार दानादि देने लगा, दया धर्म का पालन करने लगा।

अपनी प्रजा का पुत्रवत पालन करने लगा, अब इसे किसी प्रकार का दुख नही मानता हुआ समय व्यतीत करने लगा।

दोहा

श्लोकः पुत्र जन्म महोत्सव को कीनी तैयारी आज।
नगर परिवार सांमत जुड़े हो रही खुशी अपार।।६८।।

अर्थ : पुत्र के जन्मोत्सव की तैयारी राजा करने लगा, उसमें नगरवासी परिवार के लोग, प्रजानन सामंत राजादिक आकर उसमें प्रसन्नता दिखा रहे है।

श्लोकः श्री जिन मंदिर जाय के पूजा रची बनाय
संगीत वाद्य बजाय के, कीन्हा मंगलाचार।।६९।।

अर्थ : जिनेन्द्र प्रभु के मंदिर मे जाकर वाद्य-घोष पूर्वक संगीत से सहित होकर वहाँ पूजा किया।

श्लोकः सहस्त्र कलश भर नीर के, प्रभु अभिषेक कराय।
दुग्ध दहि घृत पूर के स्नपन बहुत कराय।।७०।।

अर्थ : एक हजार आठ कलश पानी के भरकर उससे जिनेन्द्र प्रभु का अभिषेक किया, दूध, दही, घी आदि से कर्म क्षयार्थ अभिषेक किया।

श्लोकः जल चन्दनादि द्रव्य से जिनवर पूज रचाय।
प्रभू की पूजा करत ही राजा अति हर्षाय।।७१।।

अर्थ : जल चन्दनादि अष्ट द्रव्यों से जिनेन्द्र प्रभु की राजा ने मन में बहुत हर्षित होकर पूजा की।

श्लोकः इति श्री जिनसेनाचार्यानुसार पंडित मूलचंद कृत चित्रसेन पद्मावती चरित्र का हिन्दी अनुवाद का चतुर्थ अध्याय समाप्त।

श्लोकः पूजन कर जयमालिका पढी नृपने विस्तार।
पूजन का विसर्जन किया, धन्य किया अवतार।।१।।

अर्थ : पूजन कर जयमाला विस्तार पूर्वक पढकर फिर पूजन का विसर्जन किया, कवि कहता है कि राजा ने अपने जन्म को धन्य किया है।

चौपाई

श्लोकः पूजन युक्त करी जै माल नर्क पशु गति वंधन टाल।
कर पूजा घर आयो जवे, नग्र वधावो कीनो जवें।।२।।

अर्थ : पूजन युक्त जयमाला पढने से नर्क पशुगति का बंधन मिट जाता है पूजा की समाप्ति के बाद राजा घर पर आया, और सारे नगरवासियों को बुलाया।

श्लोकः जीर्णोद्धार मंद्र वन वाय याचक दान दियो सुखपाय।
पुन जो नार जुकीनो तवै, जीमे स्वजन संबंधि सवे।।३।।

अर्थ : नये मंदिर बनवाये, मंदिरों का जीर्णोद्धार करवाया, याचक जनों को दान दिया, फिर सबको प्रीतिभोज दिया उसमें स्वजन संबंधी नगरवासी सबने भोजन किया।

श्लोकः ताम्बूलादि मान बहु कियो, सकल सभायुत बैठत भयों।
तब राजा सवतै इम चयो, नाम स्थापन इसको कियो।।४।।

अर्थ : सबको पानादिक देकर सम्मान किया, फिर सकल सभा से युक्त होता हुआ पुत्र का नामकरण किया।

श्लोकः पुन्य प्रभाव पुत्र मो भयो, धर्म हि मन मेरो लग गयो।
तिस कारन धर्महि अनुमान, धर्मसेन इस नाम बखान।।५।।

अर्थ : पुण्य के प्रभाव से मुझे पुत्र हुआ इसी के कारण मेरा मन धर्म में लग गया है, इसलिये इस पुत्र का नाम धर्मसेन रखता हूं।

श्लोकः भली–भली सब करते भये, जै जै शब्द तबहि जन किये।
तिसही काल पद्मावती आय, अर्द्ध सिंहासन बैठी जाय।।६।।

अर्थ : बहुत अच्छा बहुत अच्छा सब कहने लगे, सब लोग जय-जय कार शब्द करने लगे, उस ही समय पद्मावती रानी अर्द्ध सिंहासन पर आकर बैठ गई।

श्लोकः तब राजा उठ ठाडो भयो, युक्त स्वजन त्रिय चलतो भयो।
चलत चलत सो पहुंचो कहां, दान शाला मंदिर है जहाँ।।७।।

अर्थ : राजा सिंहासन से उठकर सभी सभा स्वजन युक्त होकर दानशाला मंदिर पर पहुंचा।

श्लोकः यक्ष वचन नृप सुमरन करो, रत्नसार ढावन उचरो।
ठाकर्के तब ठाडो कियो, और पद्मावती से स्पर्श करने को कहयो ऐसे बो लियो।।८।।

अर्थ : यक्ष वचन को याद करके, रत्नसार को उठाने के लिये, उसको उठा कर खडा किया, फिर पद्मावती को ऐसे कहा।

श्लोकः सुत उछंग धारन तिन कियो, हृदय पंच परमेष्ठिन दियो।
आदि जिनंद हि मन में धार, मुख इम वचन उचारै सार।।९।।

अर्थ : रानी पद्मावती ने अपने पुत्र को उठाकर हाथ में ले लिया। हृदय मे पंचपरमेष्ठी का स्मरण करती हुई, आदिनाथ भगवान का स्मरण करके मुख से ऐसा कहने लगी।

श्लोकः लोकपाल सुनियो मम वैन, सूर्यादिक नवग्रह मम अेंन।
पवन कुमार, विमानीक देव, जिन शासन सुनियो स्वयंमेव।।१०।।

अर्थ : हे लोकपाल देवों सूर्यादिक देवो पवन कुमारादिक देवों व विमानवासी देवों मेरी बात सुनों, जिन शासन मेरा प्रमाण है।

श्लोकः जो मम् अंग शील संयुक्त मन वच काय कहूं मै उक्त।
हस्त मात्र स्पर्शन के योग, रत्नसार होवे निरोग।।११।।

अर्थ : यदि मेरा शरीर शील से संयुक्त है अर्थात मन वचन काय से मै अगर शीलवती हूं तो मेरे हस्तमात्र के स्पर्श से रत्नसार निरोग होना चाहिये।

श्लोकः इम कह कर स्पर्शन करो, स्पर्श मात्र चेतनता धरो।
जैसो निद्रा उठे शरीर, त्यो मंत्री उठो गंभीर।।१२।।

अर्थ : ऐसा कहकर रानी पद्मावती ने रत्नसार को स्पर्श किया, स्पर्श करते ही उसमें चेतना आ गई, जैसे निद्रा से व्यक्ति उठता है वैसे ही रत्नसार मंत्री निरोग होकर उठ गया।

श्लोक: चित्रसेन सन्मुख जब उठो, वांह पसार तवहि सो गठो।
हर्षयुक्त तब भूपति भयो, नग्र बधाई तब ही दियो।।१३।।

अर्थ : बाँह(भुजा) पसार कर राजा सन्मुख गया, गले लगाया, हर्षयुक्त राजा हो गया, नगर के लोगो ने भी बधाई दी।

श्लोक: कहो मित्र अब मों सो बात, कुशल खेमनी के हो गात्।
धन यह वा सुर धन यह घड़ी मित्रहि देखै नैनन करी।।१४।।

अर्थ : कहो मित्र अब क्या बात है तुम्हारे शरीर की क्षेम कुशलता तो है, कवि कहता है कि यह अवसर धन्य है। यह समय भी धन्य है जो दोनों मित्र के नयन से नयन मिल रहे है।

श्लोक: चित्रसेन को जो सुख भयो, निर्धन चिन्ता मन जिमलयो।
धर्मयुक्त सो राज करंत, रत्नसार कर युक्त मंहत।।१५।।

अर्थ : चित्रसेन को जो सुख प्राप्त हुआ, उसको कह नही सकते है। मानों जैसे निर्धन को धन प्राप्त हो गया हो या उसे चिन्तामणी रत्न प्राप्त हो गया है।

श्लोक: धर्म प्रताप सकल जस बढो धर्म हि नर जु कलंक न चढो।
धर्म समान अवरनहि कोय, धर्म हिते जु जगत जस होय।।१६।।

अर्थ : धर्म के प्रताप से यश फैल गया है धर्म से किसी प्रकार का कोई कलंक नही लगा कवि का कहना है कि धर्म के समान और कोई पदार्थ नही है। धर्म से ही सारे संसार में यश मिलता है।

सोरठा छंद

श्लोक: जाकै मन मे पुण्य, ताकै हय गय अतुल धन।
सुक्रत विन सब सन्न, देखो हिये विचार कै।।१७।।

अर्थ : जिसके पल्ले में पुण्य है, उसको हाथी, घोड़े आदि अतुल धन की प्राप्ति स्वयं होती है। पुण्य के उदय बिना सब शून्य है, देखो हृदय में विचार करो।

चौपाई

श्लोक: पुण्य भाव जाकै मन रहे त्रिभुवन मे सो जस बहुल है।
वाढै वहु विभूति अधिकार हय गय वाहन अगन अपार।।१८।।

अर्थ : पुण्य भाव जिसके मन में रहता है वो तीनों लोको में यश प्राप्त करता है। बहुत विभूति बढ़ती है, हाथी घोड़े वाहन प्राप्त होते है।

श्लोक: जाकी ध्वजा धर्म अधिकार सोई एक साहस वरसार।
सोई पुरूष आहि गुनवंत सोई परम विचक्षण संत।।१९।।

अर्थ : जिसका धर्म ध्वजा पर अधिकार है वही साहसवान है वही गुणवान है और वही विचक्षण संत है।

श्लोक: सोई मन वांछित नर आहि, रूपवंत जो देखो चाहि।
सोई शीलवंत शुभ धाम, ताहि को है उत्तम नाम।।२०।।

अर्थ : सो ही मन वांछित फल पाता है, वही रूपवानों के द्वारा देखा जाता है, वही शीलवान शुभ धाम है, उसी का उत्तम नाम है।

श्लोक: इतिश्री जैनाचार्य जिनसेनाचार्यानुसारेण पं.मूलचन्दजी कृत चित्रसेन पद्मावती चरित्र का हिन्दी अनुवाद का पंचम अध्याय समाप्त।

श्लोकः आद्येन हीनं जल धाव दृश्य, मध्येन हीन भूवि वर्णनीयं।
अंतेन हीन ध्वनितेशरीरं, तन्नामं कं तीर्थपति नमामि।।१।।
अट्ठ मुहनेंन सोलस पनरस जीहाउंचरण जुय लंच
दुन्न जिय दुन्न करियल नमामि तं एरिस देवं।।२।।
चितांतीत फल प्रदः शिवकरः तीर्थेश्वरः सौख्यदः।
शुद्रोपद्रव रोग शोक हरणो माया निशा भास्करः।।
दिव्य ज्ञान युतो जगत्रय नुतो, मोहेव कंठीर वः।
कल्याणैक निकेतनं यदि हरः पार्श्व प्रभोपातुवः।।३।।

चौपाई

श्लोकः सुख सो राज करे तिहठाई,नृप पदमावती मंत्रीतांई
शिष्ट पुरूषपालें परवीन, दुर्जन जनहि मान कर छीन।।४।।

अर्थ : सुख से मंत्री सहित राजा चित्रसेन अपनी प्रिया पद्मावती के साथ राज्य कर रहा है। शिष्ट पुरूषों का पालन कराने में प्रवीण और दुर्जनों का निग्रह करने में समर्थ है।

श्लोकः याचक जनहि दान बहु देय, प्रगट दान भूमी जसलेय,
दान हि नर्क गति छुट जाय, दान हि तै जु स्वर्ग पद थाय।।५।।

अर्थ : याचक जन को बहुत दान देता था, भूमिदान करके यश प्राप्त करता था, दान करने से नरक गति छूट जाती है व दान देने से स्वर्ग पद प्राप्त होता है।

यदुक्तं : दानेन भूतानि बसी भंवति , दानेन वैराद्यप्रियांति नाशं।
परोपवंधुत्व मुपैतिदानात् ततः पृथिव्यां प्रवरं दान।।६।।

अर्थ : दान से सर्व प्राणी वश में हो जाते है, दान देने से शत्रुता नष्ट हो जाती है दान से सब बंधुत्व को प्राप्त हो जाते है इसीलिये पृथ्वी पर दान करना चाहिये।

चौपाई

श्लोकः इह विध राज करे नरराय, आगे और सुनो मन लाय।
एक दिवस की कहियन जय, सभायुक्त सो बैठोराय।।७।।

अर्थ : इस प्रकार राजा राज्य कर रहा था। अब और आगे कहता हूँ, सब लोग मन लगा कर सुनो। एक दिन राज सभा में राजा बैठा था।

श्लोकः सामंतादिक युक्त महान, बैठो सो थो इंद्र समान।
एक पुरूष तहां पर आइयो, विनती ऐसे करतो भयो।।८।।

अर्थ : सामंतादि राजाओं के बीच में वह इन्द्र के समान बैठा था। कि एक पुरूष वहाँ पर आया और विनती करने लगा।

श्लोकः देव सिंह पुर स्वामी जान सिंह शेखर राजा पहचान।
निजसेना कर गर्भितभयो, हमरी सीम विनासन लयो।।९।।

अर्थ : देवपुर नगर स्वामी सिंह शेखर अपनी सेना से गर्भयुक्त होकर हमारी सीमा का नाश करने लगा है।

श्लोकः कर तुमको कछु नाहीं देत, सेवा तुमरी नही धरेत्
मार्ग विध्वंसन करियों मही, गोकुल सकल हटायो सही।।१०।।

अर्थ : आपको कर भी नहीं देता है। आपको स्वामी भी नहीं मानता है और मार्ग का विध्वंस कर दिया है। सब गोकुल को भी हटा दिया है।

श्लोकः इमअपराध करत सो भूप, सुनो हुत को वचन कुरूप
को पारूण कटाक्ष बहु हुये, सेना में डिंडम तब दिये।।११।।

अर्थ : इस प्रकार राजा अपराध कर रहा है। हे राजन मेरी बात सुनो, यह सुनकर राजा ने कोपारूढ़ होकर सेना में डिन्डोरी पिटवाई।

श्लोकः सब सेना तब इकट्ठी भई चित्रसेन तब देखन लई।
सुभटन दान मान बहुदियो, प्रस्थान ही चलने को कियों।।१२।।

अर्थ : सब सेना को इकट्ठी करके उनको दान सन्मान देकर युद्ध के लिए चलने के लिऐ आदेश दिया।

श्लोकः चतुरंग सेना संयुक्त, चित्रसेन चलियो नृप उक्त।
वाजित्र वाद्यमान वहु किन, स्वनगरी ते चलते भये।।१३।।

अर्थ : चतुरंग सेना से संयुक्त होकर चित्रसेन राजा अपने सुभटों के साथ, वाजित्रों की ध्वनि के साथ, अपनी नगरी से चल दिया।

श्लोकः कछु प्रयान तब वीतत भये, चलत–चलत बहुते दिन गये।
प्राप्त दंडक वन मांही दारूण भय भीषण काहि।।१४।।

अर्थ : चलते-चलते बहुत दिनों में एक भयंकर भय को उत्पन्न करने वाला दण्डकारण्य में पहुँचे।

श्लोकः तहाँ जाकर नृप डेरा दिये, रात्र समे सब सोते भये।
अकस्मात क्रदन सुनो राव, जु सुन भूप चिंतन कियो ताव।।१५।।

अर्थ : राजा ने उस अरण्य में डेरा डाला। रात्रि में जब सब सो गये तब अकस्मात् एक आक्रंदन रूप शब्द सुनाई दिया। राजा ने सुनकर विचार किया कि यह शब्द किसका है।

श्लोकः ये निर्मानुष अटवी जान, अद्भुत किम सुनिये बखान
इम विचार चलियो नृप राय, खड्ग हाथ लीनो चमकाय।।१६।।

अर्थ : इस मनुष्य रहित अटवी में ये शब्द किसके है ऐसा विचार करके हाथ में तलवार लेकर उधर ही राजा चल दिया।

श्लोकः शब्द अनुसार सो गयो, कितनीक भुमि उल्लंघन भयो।
तरू उपर सो देखो कहा, मानुष एक बंधो हुवो जहाँ।।१७।।

अर्थ : शब्द के अनुसार उधर ही राजा जब चला तो कुछ दूरी पर क्या देखता है कि एक व्यक्ति बँधा हुआ पड़ा था।

श्लोकः बांधो निगड वंध कर महां, कीलो लोह कील कर तहां
दिव्य रूपधारक है सोय, किन्नर देव वा दानव होय।।१८।।

अर्थ : वह पुरूष लोहे की शृंखलाओं सें बंधा हुआ था, लोहे की कीलो से ठुका हुआ वह दिव्यरूपवान, किन्नर देव या कोई देव जैसा लगता था।

श्लोकः चित्रसेन करूणा मन धार, पूछन कियो पुरूष वनचार।
कोन तू कहाँ रहे को नाम, कहा अवस्था कीनी ताम।।१९।।

अर्थ : उस पुरूष को देखकर चित्रसेन के मन में बहुत दया आई और पूछा तुम कौन हो। तुम्हारा नाम क्या है, कहाँ रहते हो, तुम्हें इस दशा में किसने किया है।

श्लोकः सजन सुनों सकल मम बात, पीडा पीड रहो मम गात्।
मम आश्चर्य मई सुनि वचन, सहसा ग्रणी जु रचना रचन।।२०।।

अर्थ : हे सज्जन पुरूष! मेरी बात सुनो, मेरे शरीर में बहुत पीड़ा हो रही है, मेरी कहानी आश्चर्यमयी है, जो कह नहीं सकता हूँ।

श्लोकः मुंच–मुंच मम बंधु पूर्व, कीलन पीड़ित अंग जु सर्व।
स्व वृत्तांत सकल तव कहूँ, ये उपगार जु अवमें लहूं।।२१।।

अर्थः हे मेरे मित्र पहले मुझे बंधन मुक्त कर क्योंकि मेरे शरीर में बहुत पीड़ा हो रही है बाद में सब बात कहता हूँ उपकार करो।

श्लोकः नाम वैताड़य जु अद्रि महान, रूपमई जानिये सुजान
उत्तर श्रेणी श्रृंग जुलसै,नाम हेम पुरनग्र जुवसै।।२२।।

अर्थ : वैताडय नाम का पर्वत है, वह पर्वत चाँदी के समान है, उत्तर श्रेणी में हेमपुर नगर है।

श्लोकः हेम रथाभिधर राजा जान, विद्याधर जु सिरोमणि मान।
दान मान गुण युक्त जुलसै, देश–देश की रत पर वसै।।२३।।

अर्थः उस नगर का राजा विद्याधर शिरोमणि है। दान-मान गुणों से युक्त उस देश में कीर्तिपताका फैलाने वाला है।

श्लोकः त्रिया हेम माला तिस जान, हेम माला इव क्रांति महान्
हेममाली सुत तिन को जान, सो प्रभु लीजै मोह पहचान।।२४।।

अर्थः उस राजा की रानी का नाम हेममाला है। उस की क्रांति भी सोने के समान है उसके पुत्र का नाम हेममाली है वही मै हूँ।

श्लोकः प्रिया हेम चूला कर युक्त, निज वेश्म निजु भोग वहु भुक्त।
संसारों चित्त भोगे भोग, भुंजन कियो यथा विध जोग।।२५।।

अर्थः मेरी पत्नी का नाम हेम चूला है, उसके साथ में भोगों को भौगता हुआ रहता था।

श्लोकः कितने दिन इत वीतन भये, बंधन चैत्यौत्कंठा ठये।
नंदीश्वर वर तीर्थ प्रधान, उद्यम यात्रा अर्थ जु ठान।।२६।।

अर्थ : इस प्रकार काल बीतने लगा। एक दिन अकृत्रिम चैत्यालयों के दर्शन की भावना जागृत हुई, उसके लिये उद्यम किया।

श्लोकः प्रिया सहित जु पयानो कियो, वैठ विमान जु हर्षित भयो।
मार्ग जु तीर्थनि कीने नमन, आन पहुँचो दंडक वन।।२७।।

अर्थः मैने अपनी पत्नी सहित तीर्थ वंदना के लिये प्रयाण किया, सब जगह की यात्रा करते हुये इस दण्डक वन में आ पहुँचे।

श्लोकः हम पीछै तब आतौभयो, प्रिया लुब्ध मम मनसा कियो।
रत्नचूड़ नाम तिसजान, महाधृष्ट पापनि की खान।।२८।।

अर्थः मेरी पत्नी पर आसक्त होकर रत्न चुड़ामणि नाम का महान दुष्ट पापी व्यक्ति है, मेरे पीछे-पीछे आ गया।

श्लोकः सोपापीष्ट पकड़ मम लियो, बांध मार बहुतो तिन कियो।
मद्वल भाजू हर तिन लई, ना जांनू कहां पर सो गई।।२९।।

अर्थः उस पापी ने मुझे पकड कर बहुत मारा , और मेरी पत्नी को कहां हर कर के ले गया, मुझे कुछ पता नहीं है।

श्लोकः सुन वचन हेम मालिकै जै, करुणा भूपति कीनी तवें।
व्रण संरोहणी लेप तिन कियो सज्जी भूत विद्याधर भयो।।३०।।

अर्थः उसके वचन सुनकर चित्रसेन राजा को दया आ गई, उसने उसको बंधन मुक्त कर उसके शरीर में लगे घावों को दिव्यलेप लगा कर ठीक कर दिया, तब वह विद्याधर ठीक हो गया।

श्लोकः भूप चरण पद पंकज नयो, हेम माली विनती बहुं कियो।
जैसे देव छुड़ायो मोय तेसे त्रिया जुदिवावो मोहि।।३१।।

अर्थः राजा के चरणों में हेममाली ने नमस्कार किया और कहा हे स्वामिन् जैसे मुझे बन्धन मुक्त करके सुखी किया, वैसे ही मेरी स्त्री मुझे दिलवाओ।

यदुक्तं पिवंति नद्यः स्वयमेव नांभाः।
खादंति स्वादु फलानि वृक्षाः।
अदंति शष्य नयोधरा श्च,
परोपकाराय शतां विभूति।।३२।।

अर्थः जिस प्रकार नदी स्वयं पानी नहीं पीती, वृक्ष स्वयं फल नहीं खाते, गाये स्वयं दुध नहीं पीती। ये सब परोपकार के लिये होता

है, उसी प्रकार सज्जनों की विभूति परोपकार के लिये होती है।

श्लोकः वृक्षे यथा फंल पुष्पं परोपकृत हे तवे।
तथा सत्पुरूष प्राणान् धतेय पर हेतवे।।३३।।

अर्थः जिस प्रकार वृक्ष पर लगे हुये पुष्प और फल पर के लिये होते है उसी प्रकार सत्पुरूष के प्राण भी पर हित के लिये होते है।

अडिल्ल

श्लोकः एह वचन सुन भूप जु मन में हरखियो,
तिसही साथ विमानारूढ चलतो भयो।
कितनी भूमी वन में मग चलते भये, सो पापी तरूतलैति देखन लये।।३४।।

अर्थः राजा उसके वचन सुनकर मन में हर्षित हुआ और उसके साथ विमानरूढ़ होकर चलने लगा, मार्ग देखते हुये जब वह चल रहे थे, तब एक वृक्ष के नीचे उस पापी को देख लिया।

श्लोकः चित्रसेन तब हक्कित परदारामई, लंपट जासी कहां हनन करू वो मई आकस्मिक सुन गिरा भीत आपद हुवो, संग्रामहि के हेत जु–तवठाढो भयो।।३६।।

अर्थ : जब चित्रसेन राजा ने परदाय (परस्त्री) को लिये बैठा देखा तो उसको मारने का विचार कर जब वह आगे बढ़े, तब उसको देखते ही वह उनके साथ युद्ध के लिये खड़ा हो गया।

श्लोकः दारूण युद्ध परस्पर तिन बहु तव कियो, लंपट दारा नहीं जीत नृप जीतियो।
सो भय कर संयुक्त जु त्रिन मुख में लियो, भूपति के पद नमो विनती इम कियो।।३६।।

अर्थ : दोनों के बीच जब परस्पर भयंकर युद्ध हुआ और परदारा लंपटी राजा हार गया। फिर चित्रसेन राजा के सामने दुःखी मन से मुख में तृण दबाकर उनके सामने आया और नमस्कार करने लगा।

श्लोकः कांतिपुर के आधिश पुत्र मम जानिये, रत्नचूड़ मम नाम स्वामि पहिचानिये।

भूधर मादनगंधक ऊपर में गयो, विद्या साधन कारन तहां जातो भयो।।३७।।

अर्थ : कांतिपुर का अधीश रत्नचूड़ा मेरा नाम है और मै मादन गंध पर्वत के ऊपर विद्या साधने के लिये गया था।

श्लोकः करि विद्या का साधन सुहृद के साथ ही
देखत पृथ्वी कौतुहल हम आतहीं।।
प्रिया युक्त हिममाली मारग हम मिलो।
देख भामनी रूप सहृद आगे वलो।।३८।।

अर्थ : सुदृढ़ता के साथ विद्या का साधन किया। फिर पृथ्वी पर घूमने लगा। मार्ग में हिममाली को अपनी प्रिया के साथ देखा तो उस की स्त्री को देखकर मेरा मन आसक्त हो गया।

श्लोकः विद्या प्रत्यक्ष कारन कौतुक देखता, विह्वल मन विद्या पर भानजु पेखता।
मम वार्ता सुन सकल मित्र हंसते भये, अचरज कारण देख हास्य किसन ठये।।३९।।

अर्थ : विद्या को प्रत्यक्ष देख मन विह्वल हुआ, यह आश्चर्य देखकर मेरे सभी मित्र हँसने लगे।

श्लोकः क्रोधारूण हिममाली तवहू जियो, खोटे वचन जु तिन हम को बहु कह जयो।
क्रोध हुवो मम मन इस को किलन तब कियो, ले कलत्र इस गमन जु वन को हम लियो।।४०।।

अर्थ : यह देख कर हिम माली ने मेरे पर क्रोध कर खोटे वचन कहे। तब मेरे को भी क्रोध आया और इसको कीलित करके इसकी स्त्री को लेकर मैं इस वन में आ गया।

श्लोकः इस स्त्री को कुलाचार पूछन कियो, गोत्र कन्या का जान जु मन दुखित भयो।
तावत तुम इहां आये कोप जु युक्त ही, तुमरे शब्द तें भागे मेरे मित्र हीं।।४१।।

अर्थ : इस स्त्री के कुलाचार, गौत्र को जब मैंने जाना तब मन में बहुत दुःख हुआ। इतने में आप यहाँ क्रोधाविष्ट होकर आये और आपके शब्द सुनते ही मेरे मित्र सब भाग खड़े हुए।

श्लोकः जैसे सिंह निनाद जु गण कुंजर तहाँ, मद तज श्याल जु भागत दश दिश को जहाँ।
गुरू के निकट जु शील व्रत ही अंगी करो, दूजै मम कुल पुत्र जु नहि तिसको वरो।।४२।।

अर्थ : जैसे सिंह के शब्द से मदवाले हाथी भाग जाते हैं। गुरू के निकट में शीलव्रत अंगीकार करो। दूसरे मेरे कुल के पुत्र नहीं, उसको वरो।

श्लोकः चित्रसेन ने रत्नचूड़वानी सुनी, बारंबार प्रशंसा तब तिसकी गुनी।
हिम माली तब भूपती को नमतो भयो, पुनः स्तुती इम करी विनय मस्तक नयो।।४३।।

अर्थ : चित्रसेन ने जब रत्नचूड़ की वाणी सुनी। तब बारम्बार प्रशंसा करने लगे। हिममाली राजा को नमस्कार करने लगा और उसे स्तवन करने लगे।

चौपाई

श्लोकः स्वामिन जीव दान तुम दियो, मम उपगार जु तुमने कियो,
कृपा करो मम ऊपर देव, सुनो विनती भाखूं भेव।।४४।।

अर्थ : हे स्वामिन! तुमने जीवनदान दिया है। मेरे ऊपर उपकार किया है। मेरे ऊपर हे देव, कृपा करो, मेरे वचन सुनो।

श्लोकः दो विद्या मम पास सुजान, ग्रहण करो मद्वन प्रमाण।
भूपति बोलो विद्या अर्थ देशनि देश जु करतो भ्रमण।।४५।।

अर्थ : दो विद्या मेरे पास है, आप उसे ग्रहण करो। तब राजा कहने लगा, विद्या प्राप्ति के लिये तो मैं सब जगह भ्रमण करता हूँ।

श्लोकः तुम खुश होकर देत सुजान, तिस तें अपर भव्य नहि जान।
मेरे भाग्य उदय भये अवें, हम तुम संगम हुवो जवै।।४६।।

अर्थ : यदि तुम प्रसन्न होकर देते हो तो देओ, तुम्हारे समान और कौन भव्य हो सकता है। आपके मिलने से मेरे भाग्य का उदय हो गया है।

श्लोकः यह वचन विद्याधर सुनो, हो खुशाल तब ऐसो भनो।
प्रभु तुम बहुत कियो उपगार तो सम को है और उदार।।४७।।

अर्थ : विद्याधर के यह वचन सुनकर वह बहुत ही खुशहाल हुआ। हे प्रभु, तुमने बहुत उपकार किया है। तुम्हारे समान और उद्धार करने वाला कौन है।

श्लोकः महिमा अपर कहां लो भनो, हूँ सेवक स्वामी तुम बनो।
विद्या भली–भली तुम लेहु अपने हाथ कछु मो देहु।।४८।।

अर्थ : आप की महिमा कहाँ तक कहें। मैं आपका सेवक हूँ। आप मेरे स्वामी हैं। ये विद्या आप ले लो और आपके हाथ की कोई वस्तु मुझे दे दो।

श्लोकः तुम सो बात कहो सतभाव, इतनो मोमें कहा समाव।
दास जोग जानो गुन जितो, दीजै कृपा व्रत हो तितो।।४९।।

अर्थ : तुमसे सत्य कहता हूँ कि मेरे में इतना समभाव नहीं है। इस दास के लिये जितना योग्य है उतना मुझे दे दो।

श्लोकः वांछित चार पर्यंक हि नाम, दंड रत्न शत्रूजय नाम।
संहारित मूर्छित हो जाये, पुन फेरत सबही उठ जाये।।५०।।

अर्थ : वांछित चार पर्यंक नाम, दण्ड, रत्न, शत्रूं, जय नाम उसको संहार करने में मूर्छित हो जाता है। पुनः अगर फेर दिया तो सबही उठ जाता है।

श्लोकः पुन सो अपने घर ले गयो, पंचामृत सो भोजन दियो।
फिर विद्याधर पकरे पाये, सुनो बात राइन के राय।।५१।।

अर्थ : फिर अपने घर ले गया और भोजन पानादिक देकर संतुष्ट किया। उसके बाद विद्याधर ने पाँव पकड़े और कहने लगा।

श्लोकः दूजै देव आपने भेस, कछु दिवस विर मो इह देश।
दास भयो हूँ सेवा करूँ, जो कछु मोपै हो सिर धरूँ।।५२।।

अर्थ : हे देव,आप मेरे देश में कुछ दिन रहो,मै आपका दास हुआ हूँ,सेवा करूँगा जो कुछ आज्ञा दोगे वही करूंगा।

श्लोक: यह सुन बोलो चित्रजुसेन,हम तो चले हैं अपनी सेन।
चित्रसेन चलियो सुखपाई, विद्याधर आयो पहुंचाई।।५३।।

अर्थ : उसके वचन सुनकर चित्रसेन कहने लगा कि हम तो अपनी सेना की ओर चलते हैं ऐसा कहकर जब राजा चलने लगा तब विद्याधर उन्हें पहुँचाने के लिये आया।

श्लोक: रत्नचूड़ पुनि वंदन करी, एह विध विनती तब उच्चरी।
गुटिका रूप परावर्त जान, सु तुम ग्रहण करो परधान।।५४।।

अर्थ : रत्नचूड़ विद्याधर ने नमस्कार विनती की। कि हे देव, रूप परावर्तन करने की यह गुट्टिका है सो आप ग्रहण करो।

श्लोक: चित्रसेन गुट्टिका तब लीन, दूर विरोध विद्याधर कीन।
छिमा–छिमा तब दोनों करी, प्रीत परस्पर आपस धरी।।५५।।

अर्थ : तब चित्रसेन ने गुट्टिका को ग्रहण किया और परस्पर क्षमा मांग कर वैर-विरोध को दूर किया, दोनों ने ही परस्पर प्रेम को धारण किया।

श्लोक: पुनः अपनी सेना मध आय, चलत भयो नृप जीतन राय
यावत गच्छति आगे चलो, तावत और सुनो कछु भलो।।५६।।

अर्थ : राजा अपनी सेना में आकर युद्ध के लिये आगे बढने लगा, तब और क्या आगे हुआ, उसको कहते है।

श्लोक: सिंह पुराधीश प्रभुजान, भेजो दूत जु इम व्याख्यान्।
नमस्कार कर ठादो भयो, स्वामी वचन जु तुम इम कहो।।५७।।

अर्थ : सिंहपुर के राजा ने एक दूत को ऐसा संदेश देकर भेजा। दूत राजा के आगे नमस्कार कर खड़ा हो गया और कहने लगा कि हे राजन मेरे राजा ने ऐसा कहा है कि,

श्लोक: जो कल्याण जु चाही सबी, मेरी सीमा नवहरो अवी।
एह विध दूत वचन सुनराय, मन में बहुत जु उठो रिसाय।।५८।।

अर्थ : जो तुम अगर अपना कल्याण चाहते हो तो मेरी सीमा को छोड दो। ऐसी बात दूत के मुख से सुनकर राजा क्रोधित हो उठा।

श्लोकः रक्त नेंन दारूण हुवो रूप, रे अवध्य दूत निहि कुरूप।
दुःख देया को निग्रह करो वेगहि खाल काट भूस भरो।।५६।।

अर्थ : राजा ने लाल नेत्र करके कहा, अरे दूत तू अवध्य है, नहीं तो मै ऐसी बात कहने वाले कानिग्रह करूं या चमड़ा निकाल कर उसमें भूसा भरूंगा।।

श्लोकः बार–बार मो निंदा करै, कछु संक नाहि जिय में धरैं।
रत्नसार सुनि विनियो राय है, हे राजन कोय है सुभाय।।६०।।

अर्थ : बार-बार मेरी निन्दा करता है और थोड़ा सा भी तो संकोच नहीं करता है, तब रत्नसार ने कहा राजन दूत को ऐसा करना ठीक नहीं दूत तो अवध्य होता है।

श्लोकः कड़वी बात कहै। तजि सेक, ऐ मारिये न राय मयंक।
धनि एह दूत सुनो हो राय, इनको साहस कहो न जाय।।६१।।

अर्थ : कड़वी बात कहै तो भी दूत को नहीं मारा जाता है, क्योंकि दूत का जन्म ही ऐसा होता है जो अपने स्वामी की आज्ञानुसार दूसरे राजा को कह देता है।

श्लोकः मन चितवै स्वामी को काज, दुःख मे परै छांडि सुख साज।
अपने नृप को जस उच्चरै, पर नृप की अति निंदा करे।।६१।।

अर्थ : स्वामी के कार्य के लिये वह स्वयं दुःख में पड़ जाता है। अपने राजा के यश को कहता है। और दूसरे राजा की निन्दा करता है।

श्लोकः यह सुन कोप दूर हुवो तवें, इह विध दूतनि कहियो जवें।
इह कही रत्नशेखरी जाये, युद्ध करो अवही तुम आय।।६२।

अर्थ : ऐसा सुनकर राजा ने क्रोध को कम किया और दूत को कहने लगे कि हे दूत तेरे राजा रत्नशेखर को जाकर कहो कि शीघ्र ही हमसे आकर युद्ध करे।

श्लोकः तब तिन दूत शीस नवाइयों,फेर कछु नहीं उत्तर दीयो।
मन विलखा नो पहुंचो वहां ,रत्न शेखरी वैठो जहां।।६४।।

अर्थ : तब दूत सिर नवाकर चला गया, और अपने राजा के पास विलखता हुआ पहुँचा।

श्लोक: करि प्रथम कहै सो तवे चित्रसेन लरि वै कोफवै।
रत्नशेखरी ये तब सुनो, क्रोधारूढ़ न जु होय तिन भनो।।६५।।

अर्थ : प्रणाम कर कहने लगे, कि राजन् चित्रसेन लड़ने को तैयार है, यह बात जब रत्नशेखर ने सुनी, तब क्रोधाविष्ट होकर कहने लगा कि ।

श्लोक: साजहू–साजहू सुर सु जान उपजो कोप बहुत मतिमान।
मानो वेशां दूर धृत परो, तबही पृथ्वी बहु थर हरो।।६६।।

अर्थ : राजा ने बहुत कुपीत होकर युद्ध के लिये आदेश दिया। पृथ्वी को कंपाता हुआ चेष्टा करने लगा।

श्लोक: भाखो मार मार तिहवार हय गय साजै ले हथियार।
इहै बहुत गज ऊपर चढो, कर लेखङ्ग चलो रिस भरो।।६७।।

अर्थ : मारो-मारो कहता हुआ हाथी, घोड़ा सहित होकर हथियार लेकर सेना सहित स्वयं हाथी पर सवारी कर हाथ में तलवार लेकर युद्ध के लिये चल पड़ा।

श्लोक: इतते चित्रसेन परचंड, रत्नशेखरी नुतबल वंड।
दो फौज जुरी एक सार, महां युद्ध किनो भयकार।।६८।।

अर्थ : इधर चित्रसेन भी रत्नशेखर के साथ प्रचण्ड रूप धारण कर युद्ध के लिए तैयार हो गये। दोनों सेनाओ में भंयकर युद्ध होने लगा।

श्लोक: नुय भ सेनय मिलिये तिहवार, महायुद्ध किनो भयकर।
दुहूं को पकर धनुष हि लियो, चहुधाचित रोस अति भयो।।६९।।

अर्थ : दोनों तरफ भय को उत्पन्न करने वाला युद्ध हो रहा है। धनुष बाणों से लड़ाई होने लगी। योद्धा क्रोधित होकर लड़ रहे है।

श्लोक: ज्यों बाहुबल भरत चक्रेश, दुहुन कीनो जुष्ण अशेस।
धनहर चक्रषड्ग तरवार, गदा शक्ति दुहूं लइपचार।।७०।।

अर्थ : जैसे बाहुबली और भरत चक्रवर्ती लड़े थे वैसे चक्र तलवार, गदा शक्ति से लड़ रहे थे।

श्लोकः तब ये कोप चढे दोउ राय, भिडे मल्ल जो दोऊ धाही। चौथा वोथि करें दो वीर, लोटे परै गिरै धर धीर।।७१।।

अर्थ : दोनों क्रोधित होकर लड़ने लगे, युद्ध करने लगे।

श्लोकः योद्धा से योद्धा लड रहे थे, रथ सौ रथ तहां खंडन करें।
हय सो हय गय जान, प्यादें सो प्यादा पर धान।।७२।।

अर्थ : वहाँ पर योद्धा, रथ से रथ, हाथी से हाथी, घोडे से घोड़ा, पैदल से पैदल सैनिक लड़ रहे थे।

श्लोकः गगन वान आच्छादित भये, भूधंर कंप सो डिग मिग गये।
जैसे विद्याचल वन मांही, गज संग्राम भयानक छाहि।।७३।।

अर्थ : पक्षी आकाश में आच्छादित हो गये। पर्वत कांपने लगे जैसे विद्यांचल के अन्दर हाथी ही लड़ रहे हों।

श्लोकः चित्रसेन नगर पति ही जेवे, देख कोशल्या शत्रु को तवें।
बहु प्रशंसा मन में करी, पुन क्रोधारूण हुवो नरी।।७४।।

अर्थ : चित्रसेन राजा ने शत्रु के कौशल को देखकर मन में बहुत प्रशंसा करने लगा, और फिर से क्रोधारूढ़ होकर प्रहार करने लगा।

श्लोकः दंडारूण लीनो कर जवें, पंचपरमेष्ठिन ध्यायों तवे।
पुन विद्याधर गुरू सिमरंत, दंड प्रहार नरनिसो करंत।।७५।।

अर्थ : हाथ में दंड लेकर पन्च परमेष्ठी का व विधाधरगुरू का स्मरण कर शत्रु पर दण्ड प्रहार किया।

श्लोकः वैरी की सेना तिस काल, मूर्छा युक्त दंड हुई शाल।
रत्नशेखरी तहां पर जवें, एंकाकी रह गयों पुन तवें।।७६।।

अर्थ : उसी समय वैरी की सेना मूर्छित हो गई। तब रत्नशेखर अकेला ही वहां पर खड़ा रह गया।

श्लोकः विनय युक्त हयतें उतरों, चित्रसेन के पास निपरो,
वहु विध प्रीत परस्पर भई, भय कर रहित सकल जनठई।।७७।।

अर्थ : विनय युक्त होकर रत्नशेखर घोड़े से उतरा, चित्रसेन को नमस्कार करने लगा, दोनों की परस्पर बहुत प्रीति हुई। रत्नशेखर कहने लगा। सब लोग भय रहित हो गये।

श्लोकः कर कुडमल कीनी भूपति पुनः पुनः ए जु चूची विनती।
बहु अपराध युक्त मम जान देहु दंड जै है परमान।।७८।।

अर्थ : हाथ जोड़-जोड़ कर रत्नशेखर राजा विनती करने लगा कि हे राजन् मैं आपका अपराधी हूँ, जो भी योग्य हो वो मुझे दण्ड दीजिऐ।

श्लोकः चित्रसेन सुन हर्षित भये, आपस प्रीति परस्पर ठये।
पुन उठत वहाँ से कियो पयान, सिंह पुरी नाम शुभ को थान।।७९।।

अर्थ : चित्रसेन राजा यह सुनकार हर्षित हो गया और परस्पर प्रेम करने लगे। फिर वहाँ से सिंह पुरी को रवाना हो गये।

श्लोकः बहु विध बाजे बजे,अपार वनिता गावै। मंगलाचार। कछु दिन तहाँ पर रहते भये, पुर वसंत पतन को ठवे।।८०।।

अर्थ : बहुत प्रकार के बाजे बज रहे थे। स्त्रियाँ मंगल गा रही थीं, कुछ दिन उसी नगर में रहकर फिर अपने नगर को वापस लौट आये।

श्लोकः सन्मुख मिले मंत्री राय, सहत प्रवार जु मंगल गाय। सब जन गरी हुओ प्रमोद, पदमावती जु मिली भरगोद।।८१।।

अर्थ : सब मंत्री आदि सन्मुख आकर मिले घर-घर में मंगलाचार होने लगा। महारानी पद्मावती गोद भरकर मिली।

श्लोकः कुशल क्षेम भूपति पूछियो, सब नगरी आनन्द हु जियो।
सुख से राज करे तिह वांह, आगे और सुनो मन लाय।।८२।।

अर्थ : परस्पर कुशल वार्ता पूछी गई, सारी नगरी को आनंद हुआ, और सुख से राज्य का कार्य करने लगा, और अब आगे क्या हुआ सो सुनो।

श्लोकः इक दिना की कहीन जाय, वन क्रिड़ा को चलियो राय।
सामंतादिक युक्त महान् वहु विध सेन लिया परधान।।८३।।

अर्थ : एक दिन राजा अपने सामन्तादिकों के साथ और सेना के साथ वन-क्रीड़ा को चले।

श्लोकः पुनः क्रीड़ा कर आयो जबें पुत्र हि सन्मुख मिलियो तवै।
पिता चरन को विनियो तवें, राजा कंठ लगायो तबे।।८४।।

अर्थ : जब क्रीड़ा कर वापस आये तब पुत्र सन्मुख मिल गया, पुत्र ने पिता के चरणों में मस्तक नवाया, राजा ने पुत्र को कंठ (गले) लगाया।

श्लोकः मंगलाचार बहुत तब हुये सब नगरी में शोभा ठये।
नित प्रति जिनवर पूजा करें, मुनि जन नवधा भक्ति धरैं।।८५।।

अर्थ : नगरी शोभा से युक्त करके मंगलाचार पूर्वक नित्य जिनवर की पूजा और मुनिजनों को नवधा भक्ति पूर्वक आहार दान देता था। सारी नगरी शोभायमान हो रही थी।

श्लोकः पुन्य प्रभाव करें सो राज, वर्द्धापन दिन–दिन जग साज।
नित प्रति प्रजा जु पालन करैं, निष्कंटक रिपु जन दुख धरे।।८५।।

अर्थ : पुण्य के प्रभाव से राज्य करते हुऐ समय जाते हुये कुछ मालूम नहीं पड़ा नित्यप्रति निष्कंटक राज्य का पालन कर रहा था।

श्लोकः इह विध काल व्यतीत त जाये, सुखसों राज करै नर राय।
एक काल नर पति युत सभा, चित्रसेन जिम इंद्र जु प्रभा।।८७।।

अर्थ : इस प्रकार काल निकल रहा था, सुख से राज्य करते हुये तब एक दिन चित्रसेन राजा अपनी सभा में इन्द्र के समान बैठा था।

श्लोकः वन माली वहां पर आइयों, इह विध विनती करतो भयो।
स्वामिन तुम उद्यान मंजार, दमघोष मुनि आये सार।।८८।।

अर्थ : वनमाली वहाँ आया, और विनती करने लगा, हे स्वामिन उद्यान में दमघोष नाम के मुनि आये हैं।

श्लोकः केवल ज्ञानी, आये मुनिजान,
सुर तहां आय जु वंदन ठान।
एह विध वचन सुने नर राय, वस्त्राभर्णा दिये सब काय।।८९।।

अर्थ : वे केवल ज्ञानी मुनि हैं। देव आकर वंदना कर रहे हैं। इस प्रकार वनमाली के वचन सुनकर राजा ने प्रसन्नता से वनमाली को वस्त्राभरण से सतकार किया।

श्लोकः पुनः आंनद की भेरी दई, पुजन विध सामग्री लई।
सहत कलित्र मित्र संग लिये, मुनिजन वंदन चलते भये।।६०।।

अर्थ : आनन्द की भेरी बजने लगी। सब पूजन की सामग्री लेकर सब परिवार सहित भगवान की वंदना के लिये चले।

श्लोकः गंध कुटी जब पहुंचत भये, सहत प्रदक्षिण बहु विधनये।
यथायोज्ञ विनय कर सही, वैठत भयों तबहि नृप मही।।६१।।

अर्थ : जब वे गंध कुटी के नजदीक पहुँचे तीन प्रदक्षिणा देकर नमस्कार किया और सभा में बैंठ गये।

श्लोकः मुनिजन धर्म देशना दई, सुधा गिरा मधुरी जिनचई
भव पायोनिधि तारनहार, भविजन मंगल आनन्द कार।।६२।।

अर्थ : भगवान की वाणी खीरी, जैसे अमृत ही झर रहा हो, वह वाणी संसार समुंद्र से पार करने वाली है, भव्य जीवों को आन्नद देने वाली है।

श्लोकः यह संहनन अनित्य हिं जान, पुनः विभव अनित्य ही मान
मृत्यु नित प्रति आवै पास, तांते धर्म करो सुख रास।।६३।

अर्थ : यह शरीर, वैभव सब अनित्य है। प्रतिक्षण मृत्यु निकट आ रही है। इसलिये सुख की प्राप्ति के लिये धर्म का पालन करो।

श्लोकः इस विध सुन जु देशनासार; चित्रसेन वैराग्य अपार।
लघुकर्म जीवनि के रहै,
तब वैराग्य आयमन रहै।।६४।।

अर्थ : इस प्रकार की वाणी सुनकर चित्रसेन वैरागी हुआ। जब कर्म लघु होते है। तब वैराग्य होता है।

श्लोकः पुनः नगरी में अपनी आय, धर्म सेन सुत लियो बुलाय।
ताको राज भार सब देय, आपन मुनि पै संयम लेय।।

अर्थ : वापस नगरी में आकर अपने पुत्र को बुलाया। उसको राज्य भार देकर चित्रसेन ने मुनिराज के पास संयम धारण किया।

श्लोकः रत्नसार सुनमंत्री थाप, सहत कलित्र जु चलियो आप
बहुनगरी के भविजन साथ जाय निवोयो श्री गुरू माथ।।६६।।

अर्थ : रत्नसार ने भी अपने पुत्र को मंत्री पद दिया और गुरू के चरणों में मस्तक नवाया।

श्लोक: चार कषाय जु त्यागन करी, पंच प्रमाद दूर सब करी।
राज विभूत त्याग सब दई, बहु वैराग्य भाव मन ठई।।६७।।

अर्थ : चारों कषायों का त्याग कर पंच प्रमाद को दूर किया। सब राज्य विभूति का त्याग किया और वैराग्य भाव धारण किया।

श्लोक: स्वामिन् सुनिये हमरे वैन, ये संसार दुख वहु हू दैन।
तांते भय जु भीत हम हुये, स्वामी तुमरे पग हम गहे।।६८।।

अर्थ : हे स्वामिन, हमारे वचन सुनिये। यह संसार दुःखमयी है। इस कारण हम भयभीत हो गये हैं। इसलिये आपके चरणों में आया हूँ।

दोहा

श्लोक: भोगुण सागर परमगुरू, सरनें आयो तोहि।
या संसार समुद्रते डूबत काढो मोहि।।६६।।

अर्थ : हे गुणसागर परमगुरू मैं आपके चरणों में आया हूँ, इस संसार रूपी समुन्द्र में मैं डूब रहा हूँ। इसमें से मुझे निकालो।

चौपाई

श्लोक: मोको व्रत दी जै शुभ सार, जो बहु गति हल छेदन हार।
यह सुनि मुनिवर जंपै एह, धन तूं जिन यह कीनो नेह।।१००।।

अर्थ : इस संसार को छोड़ने के लिये मुझे व्रत दीजिये। तब मुनिराज ने कहा कि यह तुमने अच्छा विचार किया है।

श्लोक: बहुरो तूं अब हूं सुख लहै, जामन मर्न सवें ही दहै।
यह सुन चित्रसेन जिय धरो, खिमा खिमंत्तर सबसों करो।।१०१।।

अर्थ : मुनिराज कहने लगे संसार को त्याग कर मुनि पद धारण करना ही जामण मरण मिटाने वाला है, यह सुन चित्रसेन ने सबसे क्षमा-क्षमा कर संयम धारण करने का विचार किया।

श्लोक: मित्रभाव सबसों परगास, राग दोष दोऊ जिय नास।
पुनः आभूषण भूषित सीस, छिन में उतार दिये नर ईस।।१०२।।

अर्थ : सबसे मित्रभाव, रागद्वेष का त्याग कर वस्त्राभूषण उतार दिये।

श्लोक: कंचन कुंडल दीने डार, मूके वस्त्राभर्ण उतार।
पंच महाव्रत पर चित दियो, पंच मुष्ठि सिर लोचन कियो।।१०३।।

अर्थ : सोने के कुण्डल और वस्त्राभरण उतार कर पंचमुष्टि लोच कर पंच महाव्रत धारण कर लिया।

श्लोक: बाह्याभ्यंतर शुद्ध भयो, अति निग्रंथ मनोहर थयो।
और जु हैं भविजन तिह थान, तिन दिक्षा लीनी परवान।।१०४।।

अर्थ : बहुत से भव्य जीवों के साथ बाह्याभ्यंतर परिग्रह को त्याग कर दीक्षा धारण कर ली।

श्लोक: पद्मावती रानी सुभचित हे अर्जिका व्रत ली पवित्र।
वस्त्राभरण भोग सब गई, छीन में छांड दियो तिन सर्व।।१०५।।

अर्थ : रानी पद्मावती ने भी शुभचित्त होकर अर्जिका व्रत धारण कर लिया। उसने भी वस्त्राभरण शीघ्र छोड़ दिये।

श्लोक: तब चित्रसेन भृमे वनराई, महामुनीश्वर भयो सुनाई,
चाहे महाव्रतन की छांह, इन्द्री वन छाड़ो छिन मांहि।।१०६।।

अर्थ : तब चित्रसेन वन में महाव्रतों को धारण कर अपनी इन्द्रियों को वश में करके भ्रमण करने लगे।

श्लोक: दृढ़ चारित्र धरोजिय जोय, आठ बीस गुन पालै सोई।
निजपद आराधै गुनराउ, भ्रमे अकेलो चित्त सुभाऊ।।१०७।।

अर्थ : अट्ठाइस मूलगुणों का पालन करते हुये दृढ़ चारित्र का पालन करने लगा।

श्लोक: देइ जोग वन भीतर जाय, बहुत सहै उपसर्ग सुहाय।
धरै ध्यान अति धीरै चित, ठाडो मानो मेरू पवित्र।।१०८।।

अर्थ : जंगल में उपसर्ग परीषह सहन करता हुआ कायोत्सर्ग मुद्रा धारण कर ध्यान में खडे हो गये।

श्लोक: एकान्तर दिन लेइ अहार, सहै परीसा बाइस सार।
पावस ऋतु द्रमतरू सो रहे, ग्रीष्म ऋतु गिरीपर दुख षहै।।१०९।।

अर्थ : एकान्तर आहार ग्रहण करते थे। वर्षा ऋतु में पेड़ के नीचे और गर्मी के दिन पहाड़ के ऊपर रहते थे।

श्लोक: शीत काल सागर के तीर, इह विदुख सहै जु शरीर।
बहुत भई अति खिनी देह, छांडे सवें सुख भव नेह।।११०।।

अर्थ : शीतकाल में नदी के किनारे रहकर दुःख सहन करके अपने शरीर को क्षीण कर दिया ।

श्लोक: हिम पटल न तन छायो ताहि, सब सुख लहिये जातन छांहि।
एक ध्यान सो बैठो रहे, कोऊ ताको भेदन लहै।।१११।।

अर्थ : शरीर पर बर्फ जम गयी है, सब सुख छोड दिया। एंकाकी ध्यान में बैठे रहते थे। उसका भेद कोई नहीं जान सकता था।

श्लोक: कोऊ कहे चित निर्मयों, काहू ने पाखान जु चयो।
कोहू कहे कांठ की देह, मन वच क्रम ऐसे थिर नेह।।११२।।

अर्थ : कोई कहने लगा कि चित्राम ही है, वो भी पाषांण की बनाई हुई कोई कहने लगा काष्ट का शरीर है, उन्होंने अपने मन, वच, काय को स्थिर कर लिया था।

श्लोक: वनचर जीवन भय मन धरै, तासौ देह घसे सुख करै।
पंछी बैठे अरू उड जाय, ताकि संकन कहु करांई।।११३।।

अर्थ : वनचर जीवो तो किसी प्रकार का भय नहीं रहा, मुनिराज के शरीर से अपना शरीर ठूँठ समझकर घीस रहे थे, पक्षी ऊपर बैठ जाते थे। कुछ शंका ही नहीं कर रहे थे।

श्लोक: गिरी कंदर निसैंनसो करै, कछु न दुख मन अपने धरै
जो चलता बहु दल बल साज, गय ऊपर सो चढतो गाज।
खिन ही सुखासन चढतो राऊ महिपर कबहुं न देतो पांउ।
भ्रमै उधरै पावन सोच, ताके चित महा सुख होय।।११५।।

अर्थ : गिरी कंदराओं में निर्भय होकर निवास कर रहे हैं, जो पहले दल बल पूर्वक हाथी पर चढ़कर चलते थे, वो आज पैदल सर्वत्र घूम रहे थे।

श्लोकः छत्र छांह चलतो दिन रात, रहतो सदा सुख दुख घात।
ताके सिर पर ग्रीष्म भानु, महा तपत को करै वखान।११६।

अर्थः जो छत्र छाया में रात -दिन चलते थे, उनके सिर पर आज ग्रीष्म काल का सूर्य तप रहा है, ऐसे महामुनि कठोर तप कर रहे थे।

श्लोकः वर्षा, शीत परै असरार सहै दुख वन सो अधिकार
कृष्णागर बहु कुं कुं गार , तन जु चर्च तो निहार ।।११७।।
राज सुख बहु रमतो सोय, सहे परीषह बावीस सोय,
मन वच काय विचारे चित्त जाने एक शत्रु अरू मित्र।।११८।।

अर्थ : वर्षा व शीत के दुःख सहन कर रहे थे, देव लोग कृष्णा गुरु व चंदन से उनके पाद चर्चित कर रहे थे। जिन्होंने शत्रु, मित्र को एक सा जान लिया है।

श्लोकः भव्य जीव प्रतिवोधै जैन, मिथ्याति तिमिर विना सो तेन।
धर्मा धर्म प्रकाशक संत, भाषो जिन त्योहार महंत।।११६।।

अर्थः जिनेन्द्र भगवान ने जैसा कहा है, उसी प्रकार भव्य जीवों को सम्बोधित कर रहे थे।

श्लोकः अन्तकाल सन्यास जु कियो, पुन सर्वार्थ सिद्धतिन लियो।
पुनः जु मनुष्य एक भव पाप, कर्म शिवपुर को जाय।।१२०।।

अर्थः अंतकाल में सन्यास धारण कर सर्वार्थ सिद्धि में देव उत्पन्न हो गये, वहाँ से एक भव धारण कर मोक्ष पधारे।

श्लोकः पुनः पदमावती शुभ व्रत लीन, करै महाव्रत तन अतिखीन,
सहै परीक्षा कही न जाय, नाना विध को कहै बनाय।।१२१।।
सन्यास हि तिनत जो शरीर, स्त्री परजाय छेदी धीर।
अच्युत स्वर्ग देव भयो तेह, अपधर कोडी भरता तेह।।१२२।।

अर्थः पदमावती आर्यिका ने घोर तपश्चरण करके सन्यास सहित शरीर छोड़ा और स्त्री पर्याय को छेद कर अच्युत स्वर्ग में देव हो गई ।

श्लोकः बाईस सार आय प्रमाण विलसै सुख को कहै वखान।
सो बहु रोजाहै शिव थान हैवे है सो परमेस प्रमाण ।।१२३।।

अर्थः पद्मावती ने बाईस सागर की आयु पाई और सुख को भा.. लगी, वहाँ से चलकर मोक्ष को जायेगी।

श्लोकः रत्नसार मंत्री सुभचित, बहु विध तप जु रोग रिष्ट।
मर्नसमाधि कियो तिन सोय, वे ही स्वर्ग विषै सुरहोय।।१२४।।

अर्थः रत्नसार मंत्री ने भी घोर तपश्चरण किया, और स्वर्ग में देव पर्याय पायी।

श्लोकः यह श्री शील तनो फलसार जो भव दुख विनासन हार,
सब ही जीवन को है शर्ण, जन्म जरा नाशन शुभ कर्ण।।१२५।।

अर्थः यह सब शील का प्रभाव जो भव दुख को नाश करने वाला है, सबही जीवों का शरण है। जन्म जरा मृत्यु को नाश करने वाला है।

श्लोकः शील हितें जु जगतजु होय, शील हि व्याधगहै नहि कोय।
शील धुरंधर जो नर होय, स्वर्ग मोक्ष फल पावे सोय।।१२६।।

अर्थ : शील के प्रभाव से जगत में प्रसिद्धि प्राप्त होती है शीलवान को व्याघ्र भी नहीं खाता है। जो शील धुरन्धर होता हे, उसको स्वर्ग और मोक्ष की प्राप्ति अवश्य ही हो जाती है।

श्लोकः चित्रसेन जैसो फल लहों, मूल चन्द कवि परगट कहो।
भविजन सुने सकल दे कान, शीलरत्न धारो परमान।।१२७।।

अर्थ : चित्रसेन ने जो फल प्राप्त किया उसको पण्डित मूलचन्द जी ने प्रकट किया है। इसलिये हे भव्यजीवों शील-रत्न को धारण करो।

श्लोकः एकचित्र राखो ध्यान, सुख निध उपजै जैसे ज्ञान।
या संसार सकल सुख लहै, बहुविध मुक्ति पाय दुख दहै।।१२८।।
शील चरित्र जु पूरन कियो, जैसो आगम में देखियो
भूल–चूक जो कछु इक होय, पंडित जन सो धोतज छोह।।१२९।।

अर्थ : जैसा आगम में था वैसा मैनें लिखा है हे पंडितजनों अगर मुझसे भूल-चूक हुई तो मुझे क्षमा कर देना।

दोहा

श्लोकः साहपुर नगर सुथान है राजविक्टोरिया मान
नाम कुरू जंगल देश मे, पूरन ग्रंथ बखान।।१३०।।

अर्थ : साहपुर नगर जो राजा विक्टोरिया के राज्य में है, कुरू जांगल देश में है वहाँ ही इस ग्रन्थ को पूरा किया।

श्लोकः ऋषि वखतावर गुरू कहै, तिन मुझ दीनो ज्ञान।
तिन के पद पंकज सुमर, मूलचंद्र व्याख्यान।।१३१।।

अर्थ : वखतावर मेरे गुरू हैं उन्होनें ही मुझे ज्ञान दिया है, उनको सुमरण कर मैने यह ग्रन्थ लिखा है।

श्लोकः जतीरूप सब कहत है, धारत पंच जु वर्ग।
काल पंच में दोषते सघना नाहि जिनमार्ग।।१३२।।

अर्थ : सबही उनको यती कहते हैं। लेकिन कवि कहता है पंचम काल में काल-दोष से जिन-धर्म पूर्ण रूप से पालन नहीं होता।

श्लोकः आसौज मास की द्वितीया को यह ग्रन्थ कवि मूलचन्द ने समाप्त किया।

इस प्रकार जिनसेनाचार्य ग्रन्थानुसार श्री मूलचन्द जी द्वारा रचित चित्रसेन पदमावती –चरित्र का हिन्दी भाषान्तर समाप्त।

हिन्दी भाषान्तर कारकी

प्रशस्ति

श्री मूलसंघ के सरस्वती गच्छ बलात्कार गण में श्री आचार्य कुन्द–कुन्द देव की परम्परा में आचार्य आदिसागर (अंकलीकर) हु उनके शिष्य तार्किक चूड़ामणि, सिद्वान्तज्ञ ,आचार्य शिरोमणी महावं, कीर्ति जी हुये उनका मै एक छोटा सा शिष्य जो उनेक पदों का धारी गणाधिपति गणधराचार्य कुन्थुसागर हूँ। मैने ही इस चित्रसेन चरित्र का हिन्दी–भाषान्तर संवत २०४७ फाल्गुन शुक्ला १३ को भरतपुर जिले के कांमा नगर मे दिवान मंदीर के जिनालय में स्थित गणनी आर्यिका विजयमति भवन में बैठकर समाप्त किया।